ज्ञानामृत

सितम्बर, 1987
वर्ष 23 ❋ अंक 3

मूल्य 1.75

कटनी: स्वामी शंकराचार्य विष्णुदेवानन्द जी को राखी बांधती हुई ब्र.कु. सुशीला

नई दिल्ली: राष्ट्रपति महामहिम भ्राता आर. वेंकटरामन को पावन राखी बांधने के पश्चात् ब्र.कु. सुधा आत्म-स्मृति का टीका लगा रही हैं।

गुजरात के राज्यपाल भ्राता आर.के. त्रिवेदी को ब्र.कु. सरला राखी बांधते हुए।

भोपाल: माननीय राज्यपाल भ्राता डॉ. के.एम. चाण्डी जी को राखी बांधती हुई ब्रह्माकुमारी अवधेश जी।

नयी दिल्ली: ब्रह्माकुमारी पुष्पा भ्राता नारायण दत्त तिवारी, भारत के वित्त मंत्री जी को राखी के पावन पर्व का रहस्य समझाते हुए।

ट्रिवन्ड्रम: ब्र.कु. कलावती, केरल के राज्यपाल भ्राता पी. रामचन्द्रन जी को राखी बांधने के पश्चात् प्रसाद देते हुए।

इन्दौर: ओमशांति भवन में आयोजित ज्ञानांजली कार्यक्रम में ब्रह्माकुमार कुरुणा जी, संस्था के अंतर्राष्ट्रीय मुख्यालय माऊंट आबू में जनसम्पर्क अधिकारी अध्यक्षीय सम्बोधन देते हुए।

देहली: ब्र.कु. राज देहली के उप राज्यपाल भ्राता एच.एल. कपूर जी को आत्म-स्मृति का टीका देते हुए।

शिमला: ब्र.कु. अरुना, बहिन विद्या स्टोक्स, अध्यक्षा हि.प्र. विधानसभा को पावनता की सूचक राखी बांधते हुए।

गुहाटी: ब्र.कु. जोनाली असम के मुख्य मंत्री भ्राता प्रफुल्ल कुमार मोहन्ता जी को आत्म-स्मृति का तिलक देते हुए।

नयी दिल्ली: श्रीमती के.सी. पंत को ब्र.कु. आशा राखी बांध रही हैं।

दुर्ग: मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री भ्राता मोतीलाल वोरा को आत्म-स्मृति का तिलक देते हुए ब्रह्माकुमारी ऊषा बहिन।

भुवनेश्वर: उड़ीसा के मुख्य मंत्री भ्राता जे.बी. पटनायक को ब्र.कु. कमलेश राखी बांध रही है।

बम्बई (गामदेवी): बी.के. कुसम महाराष्ट्र की स्वास्थ्य मंत्री बहिन रजनी सत्वा को स्नेह सूचक राखी बांधती हुई।

बैंगलोर: ब्र.कु. हृदय पुष्पा जी, कर्नाटक के स्वास्थ्य मंत्री भ्राता रचेया जी को राखी बांधती हुई।

उदयपुर के श्री जी महाराणा साहब, महेन्द्र सिंह जी को राखी बांधते हुए ब्र.कु. शील बहिन।

Regd No. 10563/65-D. (E)—70

कलकत्ता: ब्र.कु. कानन, प. बंगाल के राज्यपाल भ्राता नूर-उल-हसन जी को पावन राखी बांधते हुए।

मद्रास: ब्र.कु. वीना, तमिलनाडु के राज्यपाल महामहिम एस.एल. खुराना को राखी बांधते हुए।

माऊंट आबू: संसद सदस्य भ्राता भाटम श्रीराम मूर्ति,पाण्डव भवन में पधारे। वे तथा सत्यावती मूर्ति दादी प्रकाशमणि तथा अन्य भाई-बहिनों के साथ।

भुवनेश्वर: ब्र.कु. कमलेश उड़ीसा के राज्यपाल भ्राता बी.एन. पांण्डे जी को राखी बांधते हुए।

गांधी नगर: गुजरात के मुख्यमंत्री भ्राता अमरसिंह चौधरी, ब्रह्माकुमारी सरला बहिन से राखी बंधवाने के पश्चात् प्रसाद स्वीकार करते हुए।

नयी दिल्ली: ब्र.कु. पुष्पा,भ्राता नरसिम्हा राओ, भारत के मानव संसाधन मंत्री को राखी बांधते हुए।

चक्र चल रहा है, युग बदल रहा है!

यह संसार रूपी चल-चित्र अनवरत गति से चल रहा है। सृष्टि रूपी विराट नाटक का एक दृश्य जाता है और दूसरा सामने आ जाता है। सतयुग में श्री लक्ष्मी और श्री नारायण का और उनकी वंशावली जिसे 'सूर्य वंश' भी कहा जाता है, का निष्कंटक और सुखकारी राज्य था। वह १२५० वर्ष का भारत का **स्वर्ण युग** अथवा सतोप्रधान युग था। उस समय सभी नर-नारी जीवनमुक्त देवी-देवता थे। उसके बाद त्रेता में श्री राम का तथा 'चन्द्र वंश' का मंडलवर्त्ती राज्य हुआ। उन १२५० वर्षों में भी भारत देश में सुख और स्मृद्धि का राज्य था परंतु उसकी दो कलाएं कम थीं। यह भारत एवं विश्व के इतिहास का **रजत युग** या सतोसामान्य युग था। जन्म-जन्मांतर देह के सम्बंधों में आते-आते, द्वापर युग के प्रारम्भ में मनुष्यात्माएं देह-अभिमानी हो गईं और विकारयुक्त हो गईं। अब भक्ति-पूजा शुरू हुई, शास्त्र बने, यज्ञ होने लगे और ऋषि, मुनि, आचार्यों ने अपने मत और ग्रंथ रचे। १२५० वर्ष का यह **भक्ति युग** अथवा द्वापर युग रजोगुण की प्रधानता का अथवा ताम्र युग था। इस युग के आरम्भ में भारत का आदि सनातन देवी-देवता धर्म तो विकृत हो गया और विश्व में अन्य मुख्य धर्म इस्लाम, बौद्ध मत, ईसाई मत आदि इसी युग में स्थापित हुए। संसार में मतभेद और क्लह-क्लेश दिनोंदिन बढ़ता गया। फिर जब कलियुग आया तो तमोगुण का प्रभाव पड़ने और बढ़ने लगा। धार्मिक और राजनीतिक मतवाद, रोग-शोक बहुत बढ़ने लगे। पवित्रता और दिव्य मर्यादा का प्राय: लोप हो गया और अब अंत में प्रजातंत्र, अधर्म, हिंसा, ढोंग, योग-भ्रष्टता और आसुरी लक्षण ही दिखाई दे रहे हैं। परमात्मा शिव फिर से भारतवासियों को पतित से पावन बना रहे हैं। **अत: अब युग बदल रहा है। अब कलियुग जा रहा है और सतयुग आ रहा है। वर्तमान युग दोनों का संगमकाल है। अब फिर से गीता-ज्ञान की मुरली बज रही है। निकट भविष्य में ऐटम और हाईड्रोजन बमों के प्रयोग से होने वाले विश्व युद्ध से कलियुग का पूर्णांत होने ही वाला है।** □

कलकत्ता: बी.के. गीता तथा बी.के. वीना ने भ्राता ज्योति बसु, प. बंगाल के मुख्यमंत्री को राखी बांधी।

पटना: बिहार के मुख्यमंत्री भ्राता बिन्देश्वरी दुबे को ब्र.कु. निर्मल पुष्पा पावन राखी बांध रही है।

अमृत-सूची

१. चक्र चल रहा है, युग बदल रहा है! १
२. व्यवसायात्मिका बुद्धि और निश्चयात्मिका बुद्धि (सम्पादकीय) २
३. वैश्विक आध्यात्मिक सहयोग बैंक ४
४. राखी का सचित्र समाचार ६
५. परमात्मा से भेंट के लिये जीवन भेंट करना आवश्यक ९
६. जीवन में परिवर्तन ११
७. रक्षाबंधन (सचित्र) १३
८. चढ़ती कला—तेरे भाने सरबत्त दा भला १६
९. मधुर १७
१०. रक्षाबंधन समाचार (सचित्र) १८
११. मन द्वारा संचार (कहानी) २१
१२. नशा करें तो कैसा? २३
१३. मधुबन में क्या देखा? २४
१४. हे महामानव २४
१५. राखी का सचित्र समाचार २५
१६. सेवा का बल २९
१७. आध्यात्मिक सेवा समाचार ३२

व्यवसायात्मिका बुद्धि और निश्चयात्मिका बुद्धि

द्वापर युग से लेकर जब से संसार में दुःख और अशांति प्रवेश हुए, तब से लेकर दिनोंदिन जीवन अधिकाधिक कठिन होता गया। सतयुग और त्रेतायुग में अन्न, फल, वनस्पति आदि सहज उपलब्ध हो जाते थे। कृषि कठिन नहीं थी, ज़मीन उपजाऊ थी, वर्षा समय पर होती थी। लोगों को हल चलाने में अधिक मेहनत नहीं करनी पड़ती थी। परंतु जैसे-जैसे समय बदलता गया, सभी घटक (factors) कठिनाई उत्पन्न करने वाले होते गये क्योंकि मनुष्य के अपने कर्मों ही का परिणाम उसके अपने सामने आने लगा। सतयुग में न तो व्यापार आज की दुकानदारी अथवा वाणिज्य की तरह से बुद्धि को उलझन करने वाला था, न तब वकील और डॉक्टर के जैसे व्यवसाय हुआ करते थे। बल्कि जीवन निर्वाह सुगमता से, निश्चिंतता से, बिना किसी भय के, बिना किसी मुकाबले (competition) और ईर्ष्या के हुआ करता था। समय परिवर्तन के साथ-साथ द्वापर युग से लेकर तो लोगों को 8–10 घंटे अपने व्यवसाय में ही देने पड़े। प्रतिदिन, प्रतिमाह, प्रतिवर्ष निरंतर अपने व्यवसाय ही की बातें सोचने और करने में मनुष्य लगा रहता। और, ये सभी व्यवसाय ऐसे होते गए कि इसमें अधिक मेहनत लगने लगी, चिंता होने लगी, व्यवसाय मंदा होने अथवा छिन जाने का भय लगा रहने लगा और दूसरे व्यवसायियों के साथ उनकी होड़ रहने लगी। पैसे का लेन-देन भी दिन-ब-दिन पेचीदा होता गया, पैसे का महत्व भी बढ़ता गया, पैसे का मूल्य घटता भी गया। इस सबका परिणाम यह हुआ कि प्रतिदिन 8–10 घंटे अपने-अपने कार्य में लगे रहने के कारण मनुष्य की बुद्धि व्यवसायात्मिका हो गई।

बात यहां तक पहुंच गई कि लोग अपने व्यवसाय से ही जाने जाने लगे। लुहार, बढ़ई, मिस्त्री—इस प्रकार से हरेक व्यक्ति का परिचय होने लगा। यहां तक कि भारत में इसी के आधार पर जाति-पंक्ति बन गयी और जाति-पाति के आधार पर व्यवसाय होने लगे। आज भी लोग वकील, डॉक्टर, प्रोफेसर, इंजीनियर, संसद सदस्य इत्यादि व्यवसायों के ही आधार पर जाने जाते हैं। उनके पत्राचार के पन्नों पर भी उनके नाम के साथ उनका धंधा लिखा रहता है। इस प्रकार, व्यवसाय न केवल मनुष्य की पहचान का एक निमित्त कारण बन गया बल्कि मनुष्य की बुद्धि उसी में ही लगी रहने लगी। बहुत बार ऐसा भी देखा गया कि अपने व्यवसाय से निवृत्त होकर जब लोग घर में बैठते हैं, गाड़ी में यात्रा करते हैं, मित्रों से मिलते हैं तो भी अपने दफ्तर, दुकान, व्यापार या व्यवसाय की बात छेड़ देते हैं। वकील न्यायालय से लौटने के बाद भी अपने दफ्तर में बैठकर दूसरे दिन के केस तैयार करते हैं। व्यापारी घर में आकर भी हिसाब करने बैठ जाते या दूसरे दिन उठते ही अखबार में चीज़ों के भाव पढ़ने शुरू करते। अथवा कौन-सा सौदा खरीदना है, यह विचार करने लग जाते। डॉक्टरों को तो लोग नींद से भी जगाकर रोगी को देखने के लिए बुला लेते।

महिलाएं प्राचीनकाल में तो कोई व्यवसाय नहीं किया करती थीं परंतु अब शहरों में रहने वाली महिलाएं कई प्रकार का व्यवसाय करती हैं क्योंकि मंहगाई इतनी बढ़ गई है कि पति और पत्नी जब दोनों कमाते हैं, तब कहीं मकान का किराया और दो समय के भोजन की व्यवस्था हो पाती है। कुछ समय से तो शहरों और गांवों की महिलाएं खेती और मज़दूरी का काम भी करती हैं जो कि पुरुषों से कम मेहनत का काम नहीं है। संसार में गरीबी इतनी बढ़ गई है कि कई परिवारों के बच्चे भी काम करते हैं—इस प्रकार सभी लोग व्यवसायी हो गये हैं। जब महिलाएं कोई व्यवसाय नहीं करती थीं तब भी वे घर के काम को तो एक व्यवसाय की तरह ही करती थीं। आज भी जब किसी फॉर्म (Farm) में 'व्यवसाय' लिखना पड़ता है तो उसके सामने लिखा जाता है—'गृह कार्य' (House hold) अथवा गृहिणी (House Wife)।

बहुत से लोगों का तो यह स्वभाव होता है कि व्यवसाय के अतिरिक्त भी वे जब कभी किसी कार्य को करते हैं तो उसे भी वे ज़िम्मेवारी से, दत्तचित्त होकर, गम्भीरतापूर्वक करते हैं। यद्यपि वह उनका व्यवसाय (Business) नहीं होता तो भी उनके कार्य करने की पद्धति व्यवसायात्मक (Business–like) होती है।

इस प्रकार, व्यवसाय के लिए अथवा व्यवसाय की विधि से काम करते-करते मनुष्य की बुद्धि व्यवसायात्मिक हो गई है। जीवन-निर्वाह अर्थ कार्य एक मुख्य कार्य होने के कारण तथा

8–10 घंटे और उससे भी अधिक समय तक निरंतर किये जाने के कारण मनुष्य एक व्यवसायिक जीव बन गया और उसकी बुद्धि व्यवसाय ही के रंग में रंग गई । हालत यह हुई है कि सोते-जागते मनुष्य अपने व्यवसाय ही के लिए संकल्प करता अथवा स्वप्न लेता है और लोगों द्वारा 'डॉक्टर साहब', 'वकील साहब', 'बाबू जी', 'बॉस' इत्यादि शब्दों से बारम्बार संबोधित किए जाने के कारण मनुष्यों की संकल्प रूपी गाड़ी व्यवसाय रूपी रेल की पटरी पर ही चलती आई है । ऐसी व्यवसायात्मक बुद्धि को परिवर्तित करना अब एक कठिन कार्य हो गया है क्योंकि वैसा ही सोचते-सोचते तद्रूप हो गया है।

निश्चयात्मिका बुद्धि

वास्तव में मनुष्य का स्वरूप अपने व्यवसायात्मक रूप से भिन्न है। न वह वास्तव में बाबू जी है न बॉस, न मैनेजर साहेब और न वकील साहेब । अपनी जीवन-यात्रा में वह पहले 'मुन्ना' या 'मुन्नी', बेटा या बिटिया, या अपने नाम या उपनाम (Sir–name) से बुलाया जाता है। यह सब तो बदलने वाली उपाधियां हैं। इन सबके पीछे 'मैं' शब्द का प्रयोग करने वाली जो चेतन सत्ता है, वह तो अनादि और अविनाशी आत्मा ही है। जो कि एक ज्योतिकण अथवा ज्योतिर्बिंदु ही है और अपने आदि स्वरूप में कर्मातीत, अथवा कर्म में साक्षी एवं अनासक्त है। परंतु यह व्यवसाय करते-करते अब व्यवसायात्मिका हो गई है। निरंतर 8 घंटे से भी अधिक इसका योग व्यवसाय ही की बातों में लगा रहा है। अपने व्यवसाय से हटकर वह बीच-बीच में अपने स्वरूप का, यह निश्चय तो करती ही नहीं है कि 'मैं आत्मा हूं', 'ज्योतिबिंदु हूं', 'शांत और शुद्ध हूं', 'अपने आदि स्वरूप में कर्मातीत हूं' इत्यादि । इतनी-इतनी देर तक निश्चयात्मिका स्मृति, निश्चयात्मिका वृत्ति और निश्चयात्मिका स्थिति का स्विच (Switch) ऑफ कर देने से वह व्यवसायात्मिका स्मृति, वृत्ति और स्थिति ही में डूबी रही है। इसके परिणामस्वरूप उसे व्यवसायात्मिका बने रहने की टेर बनी रहती है। अब उसे किसी और तरफ लगाने का यत्न करती भी है फिर-फिर से वह व्यवहार ही की तरफ लौट कर जाती है। गोया अपनी आदत से मजबूर हो गई है। टाले भी टलती नहीं । अब जब उसकी ऐसी गति-मति हो गई है तब उसे निश्चयात्मिक बनाने में बड़ी मेहनत लगती है।

इसी बात को ध्यान में रखते हुए हमें शिवबाबा ने कहा है कि व्यवसाय अथवा धंधा धोरी करते हुए थोड़े-थोड़े समय के बाद अपने स्वरूप को याद करो—अपने को आत्मा समझो, बुद्धि को परमधाम में, कर्मातीत अवस्था पर ले जाओ और फिर जब दोबारा व्यवसाय करना शुरू करते हो तो स्वयं को साक्षी मानकर कर्म करो ताकि बुद्धि ठोस व्यवसायात्मिका न हो जाए । बल्कि शिवबाबा ने तो यह समझाया है कि व्यवसाय का कार्य प्रारम्भ ही बाद में करो और सबसे पहले यह सोचो कि मैं एक आत्मा हूं, ज्योतिबिंदु हूं, अपने स्वरूप में शांत हूं और फिर यह स्मरण करो कि "मैं परमधाम् से आकर शरीर में प्रवेश करके कर्मेन्द्रियों का आधार लेकर मैं इस कर्म-क्षेत्र पर कर्म करता हूं परंतु प्रकृति के इस पराए जगत से फिर मुझे वापस जाना है।" इस प्रकार बार-बार अपनी बुद्धि को व्यवसायात्मिक की बजाए निश्चयात्मिक करो और व्यवसाय करते हुए भी इस निश्चय अथवा स्मृति से ज्यादा दूर न जाओ ।

इसके अतिरिक्त बाबा ने यह कहा है कि व्यवसाय करते हुए भी स्वयं को डॉक्टर साहब, मैनेजर, बाबू जी अथवा बॉस निश्चय न करो बल्कि यह समझो कि यह तो जीवन रूपी ड्रामा में मेरा पार्ट है परंतु इस पार्ट को बजाने वाला मैं स्वयं इससे अलग अथवा भिन्न हूं । मैं एक आत्मा हूं और शिवबाबा का बच्चा हूं । यह तो शरीर के निर्वाह अर्थ व्यवसाय के आधार पर मेरे नाम पड़े हैं परंतु मैं तो शरीर ही से अलग एक चेतन आत्मा हूं । व्यवसाय करते हुए भी इस प्रकार स्वयं को न्यारा बनाकर रखो ताकि बुद्धि पूर्ण रूप से व्यवसायात्मिका न हो जाए, निश्चयात्मिका भी बनी रहे ।

शिवबाबा ने एक युक्ति यह भी बताई है कि जो भी व्यवसाय करते हो, उसको करते समय यह सोचो कि मैं तो निमित्त अथवा प्रन्यासी (Trustee) हूं । ऐसा सोचने से स्वत: ही शिवबाबा की याद आयेगी और शिवबाबा की याद आने से अपने स्वरूप अर्थात् आत्मा के परिचय की भी याद आयेगी । गोया बुद्धि थोड़ी-बहुत तो निश्चयात्मिका हो ही जाएगी ।

जो महिलाएं गृहिणी का कार्य करती हैं, उनके लिए भी बाबा ने कहा है कि जब वे भोजन बनाएं तो ये सोचें कि भगवान के लिये भोग बना रही हूं । परमात्मा को ही पतियों का पति मानें । उसके साथ ही अपने सब सम्बंध समझते हुए गृह कार्य अथवा व्यवसाय करें । इस युक्ति से उनकी बुद्धि व्यवसायात्मिका की बजाए निश्चयात्मिका हो जाएगी ।

विशेष बात यह कि बाबा ने कहा है कि दिन में कम-से-कम 5–7 बार और खासतौर पर अमृतवेले (जबकि हमें कोई भी व्यवसाय नहीं करना होता) तथा रात्रि को सोते समय (जबकि हमारा व्यवसाय समाप्त हो चुका होता है), पूर्ण रीति से निश्चयात्मिका बुद्धि का अभ्यास करना चाहिए । व्यवसाय की बातों को एकदम भुला देना चाहिए । अपने स्वरूप में स्थित होना ही 'निश्चयात्मिक बुद्धि' होना है। इसी का दूसरा नाम सहज राजयोग है।

—जगदीश चन्द्र

वैश्विक आध्यात्मिक सहयोग बैंक

□बी.के. रमेश, गामदेवी, बम्बई

आज के विश्व में अनेक कार्यों का कार्यक्षेत्र इतना व्यापक, कठिन तथा समय लेने वाला हो गया है जो किसी एक व्यक्ति द्वारा उसका सम्पूर्ण रूप से सुचारू आयोजन करना सम्भव नहीं। अनेक राष्ट्र, अनेक धर्म, अनेक सम्प्रदाय, भाषा, वर्ण आदि के भेदों के कारण लक्षित कार्य जल्दी हो नहीं पाते। कार्य करने के लिये अनेक व्यवसायियों का सहयोग चाहिये तब ही कार्य की पूर्ति हो सकती है। उदाहरण के तौर पर यदि एक मकान बनाना होता है तो जमीन खरीदने के लिये धन चाहिये, वकालत का ज्ञान चाहिये, नक्शे बनानेवालों का सहयोग चाहिये, स्थानिक पंचायत आदि से सम्मति प्राप्त करनी पड़ती है। इसके अतिरिक्त लोहा, सीमेंट, लकड़ी आदि चाहिये, इंजीनियर्स चाहियें और कार्य करनेवाले मज़दूर, मिस्त्री, बढ़ई आदि चाहियें। रंग लगानेवाले, फर्नीचर बनानेवाले, बिजली का सामान आदि अनेक बातों के आधार तथा सहयोग से एक छोटा-बड़ा मकान बनता है।

एक मकान बनाने में इतने लोगों के सहयोग की ज़रूरत है तो नये विश्व, श्रेष्ठ विश्व की रचना में अनेक प्रकार की बातों की जरूरत पड़ती है और सबका सहयोग एक समय में नहीं किंतु अलग-अलग समय पर चाहिये। श्रेष्ठ कार्य अर्थ ज़रूर ही, श्रेष्ठ बुद्धिमान विशेषज्ञों की जरूरत है।

ऐसे ही अन्य अनेक बातें हैं जिसमें अनेकों का सहयोग चाहिये। सब प्रकार का सहयोग धन से नहीं मिलता। सब प्रकार के सहयोग का न ही कोई बाजार या दुकान होती है। इसका एक साधारण मिसाल है—जब कोई मरीज बीमार है—ऑपरेशन होता है, तो उसे खून चाहिये—विभिन्न प्रकार का खून चाहिये। हरेक मनुष्य के खून का ग्रूप (Group) अलग-अलग होता है। खून बनाने की फैक्टरी तो है नहीं, वह शरीर में ही बनता है। इसका लेनदेन धन की बजाए दान की भावना से अधिक अच्छा हो सकता है। ऐसे ही आंख के अंदर जो सफेद टीकी (Cornea) है, उसकी लेनदेन से अनेक अंधे मनुष्य फिर से देख सकते हैं। मूत्रपिंड (Kidney) द्वारा रक्त शुद्ध होता है। हरेक मनुष्य के शरीर में दो पिंड होते हैं। एक ज्यादा (Extra) है और उसका कोई दान देना चाहे तो दे सकता है। ऐसे अनेक प्रकार के विशेष सहयोग अर्थ, दान की भावना को उत्तेजन देने अर्थ देश-विदेश में अनेक प्रयोग हुए हैं।

जो कार्य धन के प्रयोग से नहीं हो सकता वह भावना के बल पर हो सकता है। इन्हीं भावनाओं को व्यवस्थित संकलन रूप देने के प्रयोग का नाम है "बैंक"। रक्त बैंक, मूत्रपिंड बैंक, नेत्र बैंक (Blood Bank, Kidney Bank, Cornea Bank) आदि अनेक प्रकार के बैंक बने हैं जहां पर दाता अपने जीवन-काल में या मृत्यु पश्चात् अपने शरीर के कुछेक अंग दान में देता है जिसको अन्य व्यक्ति स्वीकार करके अपने जीवन में सुख-शांति पा सकता है।

आध्यात्मिक शक्ति को आज अनेक लोग अनेक रूप-भाव से स्वीकार करते हैं। प्रभु-प्रार्थना आध्यात्मिक शक्ति का एक रूप है। प्रभु-प्रार्थना द्वारा, सुख, शांति, आनंद, प्रेम, शक्ति आदि दैवी गुणों का अनुभव होता है तथा उसके द्वारा अन्य आत्मा को आत्मिक-बल भी दे सकते हैं। ऐसे प्रार्थना-बैंक भी विदेशों में बने हुए हैं जिनके सदस्य आपस में प्रार्थना जमा करते हैं और लेन-देन भी करते हैं। धन एक शक्ति है। यह शक्ति जिसके पास ज्यादा होती है वो बैंक में जमा करता है और जिस व्यक्ति को वर्त्तमान में उसकी अधिक जरूरत होती है वह उसी बैंक से सहयोग लेकर, ऋण (कर्जा) लेकर अपना व्यवसाय प्रस्थापित करता है। जैसे धनशक्ति का संचय करनेवाला बैंक है ऐसे ही प्रार्थना-शक्ति का संचय करनेवाला प्रार्थना-बैंक (Prayer–Bank) है। जब उसका कोई सदस्य बीमार होता है तो वह बीमार व्यक्ति या उसका कोई मित्र-सम्बन्धी प्रार्थना-बैंक के संचालक को पत्र या फोन द्वारा समाचार देता है। इस पर बैंक संचालक फौरन ही अपने अन्य सदस्यों को समाचार भेजता है कि अपना यह सदस्य बीमार है इसलिये आप सब उनके स्वस्थ स्वास्थ्य के लिये प्रार्थना कीजिये। इस तरह सब सदस्य बीमार व्यक्ति के लिये प्रार्थना रूपी आध्यात्मिक शक्ति का दान जमा करते हैं। ऐसे प्रार्थना-बैंकों के अनेक शुभ परिणाम आये हैं।

स्कूल-कॉलेजों में पढ़नेवाले बच्चे जब परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाते हैं तो बाद में उनकी किताबें फालतू हो जाती हैं और फिर वही पुस्तकें उसी वर्ग में आये नये विद्यार्थियों के काम में आ सकती हैं। विशेष रूप से गरीब विद्यार्थियों के लिये वे पुस्तकें बहुत ही उपयोगी हो सकती हैं। धनवान बच्चों को जब किताबों की जरूरत नहीं होती तब उन्हें बेचने के बजाए किताबों की बैंक में जमा करना है। ऐसी किताब-बैंकों द्वारा फिर गरीब विद्यार्थियों को मदद मिलती है। उन्हें इस प्रकार किताबों के सहयोग द्वारा

बहुमूल्य मदद मिलती है। Book Bank का कार्य देश-विदेश में अच्छी तरह चलता है।

जब नया मकान बनता है तो उसकी नींव डालनी पड़ती है। नींव में लोग अनेक प्रकार की चीज़ें रखते हैं। कोई पंचधातु रखते हैं,तो फिर कोई श्रद्धावान लोग उसमें रामनाम लिखकर रखना चाहते हैं। किन्तु उनके पास उनके इच्छानुसार (10–15 लाख) श्रीराम या श्रीकृष्ण नाम लिखने का समय नहीं है। कई लोगों को अपने इष्ट देव के नामों को नींव में डालने से नींव मजबूत होगी ऐसी श्रद्धा है। ऐसी श्रद्धापूर्ति के लिये अन्य लोग जिनके पास समय है—इच्छा है, वह कागज पर राम-नाम, आदि लिखकर रामनाम-बैंक या गायत्री मंत्र-बैंक में ऐसे कागज जमा करते हैं। वहां से जिनको उसी मंत्र या रामनाम लिखे कागज़ों की ज़रूरत है वे ले जाते हैं। इस तरह रामनाम-बैंक आदि अनेक प्रकार की बैंक अनेक सम्प्रदायों द्वारा चलती हैं।

कलियुग को वरदान है—भजन कीर्तन का। भजन-कीर्तन का बैंक है—मंडल है। उनके सदस्य आपस में भजन-संकीर्तन करके उस भजन-शक्ति को उसके लिये बनाए भजन बैंक में जमा करते हैं। नये-नये भजनों की आपस में लेन-देन करते हैं। और फिर भजन-बैंक द्वारा भजन-सम्मेलन आदि का आयोजन करते हैं जिसमें 48–60 घंटे अविरत रूप से भजन गाते हैं—कीर्तन करते हैं या धुन लगाते हैं।

अमेरिका में एक नय प्रकार का बैंक निकला है उसका नाम है बॉटल-बैंक (Bottle Bank) । अमेरिका में लोग रोज़ाना अनेक प्रकार की बोतलों का उपयोग करते हैं। और उसका एक बार उपयोग करके फेंक देते हैं। अब वास्तव में उसी बोतल को फिर से यदि कोई उपयोग करना चाहे तो धुलाई करके कर सकता है।फिर से उपयोग करने से कचरा आदि कम हो जाता है अर्थात् अनेक फायदे हैं यदि बोतल दोबारा उपयोग करते हैं तो। विभिन्न नगरपालिकाओं द्वारा या अन्य सेवाधारी संस्थाओं द्वारा ऐसी बोतल इकट्ठी करके देने वालों को पुरस्कार दिया जाता है। और फिर बोतल काम में लानेवाली कम्पनी पैसा देकर बोतलें खरीदती है। इस प्रकार गरीबों को मदद मिलती है और समाज का एक अच्छा कार्य स्वेच्छा से होता है।

इस प्रकार रक्त-बैंक (Blood Bank), मूत्रपिंड-बैंक Kidney Bank), नेत्र-बैंक (Eye Bank), प्रार्थना-बैंक (Prayer Bank), भजन बैंक तथा बोतल बैंक (Bottle Bank) देश-विदेश में अनेक रूप से चलते हैं।

ऐसे बैंकों द्वारा हो रही समाजसेवा के अंदर एक विशेष नये प्रकार के बैंक का आयोजन अपने विश्वविद्यालय द्वारा हो रहा है। अपने विश्वविद्यालय द्वारा ज्ञान-योग सबको सिखाया जाता है जिससे एक नये श्रेष्ठ, सबके कल्याण करनेवाले समाज की रचना हो। ऐसे नये समाज को हम सतयुग कहते हैं, क्योंकि वह सत्य है—कल्पना नहीं, सत्य पिता की रचना है इसीलिये उसे हम सतयुग—देवी-देवताओं की दुनिया कहते हैं। यह देवताओं की दुनिया है क्योंकि उसी के निर्माण में देनेवालों ने देवता बनकर सहकार दिया है। वहां कोई लेवता नहीं—परंतु देनेवाला दाता है और वह सृष्टि परम-दानेश्वर परमपिता द्वारा दिया गया वर्सा है। परमपिता परमात्मा ने यह महान कार्य सिद्ध करने के लिये यह अविनाशी-रुद्रज्ञान-यज्ञ रचा है। यह एक **अविनाशी बैंक** भी है क्योंकि उसके अंदर सभी ब्रह्मा-वत्स अपने मन-वचन-कर्मों को अर्थात् तन, मन एवं धन जमा करते हैं। और परमात्मा उसका एक का दस या सौ गुणा करके वापस सबको नई सृष्टि में देता है। शिव पिता परमेश्वर किसी का रखता नहीं है—सबको वापस देता है—तमोप्रधान का रूप परिवर्तन करके सतोप्रधान स्वरूप बनाते हैं। अब तक हम बच्चों ने इस विश्वविद्यालय का अविनाशी रुद्रज्ञान-यज्ञ का रूप प्रत्यक्ष किया। अब उसका अविनाशी-बैंक का रूप प्रत्यक्ष कराना है—उसी का साक्षात्कार कराना है क्योंकि आज की सृष्टि में सब बातों का मापदंड है धन। और धन की बचत बैंक में लोग जमा करते हैं। भारत सरकार ने बैंक के कार्य को व्यापक कराने के अर्थ में ग्रामीण बैंक आदि अनेक प्रकार के बैंक खोले हैं। अर्थात् आज का धन-प्रधान समाज बैंक के कार्य को समझ गया है। परंतु वे सब विनाशी बैंक हैं और गायन है "किसी की दबी रही धूल में... आदि।" अविनाशी बैंक में जमा करने से आनेवाले नये श्रेष्ठ विश्व में श्रेष्ठ भाग्य मिल सकता है।

इसलिये इस अविनाशी (ईश्वरीय) बैंक में विभिन्न प्रकार के लोगों द्वारा तीन बातें जमा हो सकती हैं। पहले तो नये विश्व के लिये लायक बनना पड़ेगा। स्वपरिवर्तन के बिना विश्व-परिवर्तन नहीं हो सकेगा तथा नये विश्व में प्रवेश नहीं मिल सकेगा। स्व-परिवर्तन, स्व-पुरुषार्थ से ही हो सकेगा। इसलिये उसके लिये कौन-सा विशेष पुरुषार्थ करने की आवश्यकता है उसका निर्णय स्वत: उस व्यक्ति को ही करना पड़ेगा। हरेक में परिवर्तन चाहिये। परिवर्तन ही जीवन है। परिवर्तन आशा है, परिवर्तन भविष्य है। परिवर्तन अमृत है जो जीवन कलश में रहता है। तो यह परिवर्तनबद्ध करने-कराने का लक्ष्य है इस अविनाशी बैंक का।

नई सृष्टि की स्थापना के लिये अनेक प्रकार के कर्मयोग की जरूरत है। सब की अंगुली के सहयोग से गोवर्धन पर्वत रूपी

शेष पृष्ठ ३१ पर

राखी का सचित्र समाचार

मद्रास: तमिलनाडु के वित्त मंत्री जी से रक्षाबंधन के अवसर पर ज्ञान वार्तालाप करती हुई ब्र.कु. लक्ष्मी जी।

भोपाल में ब्रह्माकुमारी नीता म.प्र. के स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्री जी को राखी बांध रही हैं।

नयी दिल्ली में भारत के कैमिकल विभाग के राज्यमंत्री भ्राता जयचन्द्र सिंह जी को राखी बांधी गई।

बम्बई (गामदेवी): बी.के. कुसम डॉ. एम.आर. श्री निवासन, अध्यक्ष अणुशक्ति आयोग को पवित्रता की सूचक राखी बांधते हुए।

बीलीमोरा सेवाकेंद्र का ब्र.कु. दादी प्रकाशमणि जी दीप प्रज्जवलित करके उद्घाटन कर रही हैं।

कटक: बी.के. रेनु, 'समाज' के सम्पादक भ्राता राधानाथ रथ, को राखी बांधने के पश्चात् प्रसाद देते हुए।

नयी दिल्ली: भ्राता कृष्ण कौल, संसद सदस्य, रक्षाबंधन के अवसर पर ब्र.कु. आशा के साथ।

राजकोट: ब्र.कु. दादी प्रकाशमणि जी नवानामत शांत सदश भवन का उद्घाटन करती हुई।

दिल्ली: उच्चतम न्यायालय के न्यायमूर्ति भ्राता के.एन. सिंह को ब्र.कु. अमृत राखी बांध रही है।

हरिद्वार: ब्र.कु. मनोहर इन्द्रा जी के आगमन पर आयोजित स्नेह मिलन के पश्चात् कुछ महात्मागण उनके साथ दिखाई दे रहे है।

मोरबी: ब्र.कु. शारदा, भ्राता बल्लभ भाई पटेल, स्वास्थ्य मंत्री, विधानसभा सदस्य भ्राता अम्मु भाई अगारा, निगम के प्रमुख भ्राता पूनमचंद जी को ईश्वरीय सौगात देते हुए।

देहली: ब्र.कु. सुधा न्यायाधीश भ्राता एम.एम. दत्त जी को स्नेह का कंगन बांधते हुए।

कुरूक्षेत्र: भ्राता सुखबीर सिंह, उपायुक्त, कुरूक्षेत्र, राजयोग शिविर का उद्घाटन करने के पश्चात् राजयोग का अभ्यास करते हुए।

दिल्ली (शक्ति नगर) सेवाकेंद्र पर युवादिवस पर एकत्रित हुए ब्रह्माकुमार भाई और ब्रह्माकुमारी बहनें।

दमुहा: राखी बंधवाने के पश्चात् चित्र में कुछ स्वतंत्र सेनानी दिखाई दे रहे हैं।

उदगीर: रक्षाबंधन एवं जन्माष्टमी के उपलक्ष्य में आयोजित कार्यक्रम में ब्र.कु. सोमप्रभा रक्षाबंधन का रहस्य समझाते हुए।

करनाल: भ्राता पी.के. कौशल, जिला एवं सत्र न्यायाधीश के निवास स्थान पर आयोजित स्नेह मिलन में पधारे अनेक अतिरिक्त जिला एवं सत्र न्यायाधीशों के ग्रुप के साथ ब्र.कु. शीतू एवं ब्र.कु. वृजपुष्पा जी।

हापुड़: ब्र.कु.सीतु तथा शौराज सिंह मैजिस्ट्रेट भ्राता सुबोध कुमार, मैजिस्ट्रेट भ्राता बी.बी. सिंह को राखी बांधने के पश्चात् चित्र में दिखाई दे रहे हैं।

खिरसी: आध्यात्मिक कार्यक्रम में (बाएं से) ब्र.कु. गायत्री, भ्राता एस.ए. कसरकोड, भ्राता एल.जी. रायकर, तथा बी.के. बलवंत।

माऊंट आबू: ब्रह्माकुमारी बहिनें सेन्ट्रल रिजर्व पुलिस फोर्स के जवानों को राखी बांध रही है।

परमात्मा से भेंट के लिए जीवन भेंट करना आवश्यक

ले. ब्रह्माकुमारी हृदयमोहिनी, दिल्ली

जिसमें बहुत अच्छे-अच्छे गुण हों, जिसके स्वभाव में बहुत मधुरता हो, जिससे मनुष्य को बहुत प्राप्ति भी हो सकती हो और जिससे घनिष्ट सम्बंध भी हो, उससे भेंट करने की इच्छा किसको न होगी ? इसी प्रकार, परमात्मा, जो कि सभी ईश्वरीय गुणों के भंडार हैं, आनन्द के सिन्धु हैं, सुख-शांति के दाता हैं, प्रेम के सागर हैं और हमारे परमप्रिय परमपिता और परम बन्धु भी हैं उनसे भला कौन भेंट न करना चाहेगा ? परमपिता परमात्मा से भेंट करके तो मनुष्यात्मा गद्गद् हो जाती है और स्वयं को बहुत सौभाग्यशाली मानती है; उनसे भेंट न करने का विचार तो अपरिचित व्यक्ति में ही हो सकता है।

परंतु प्रश्न उठता है कि जैसे बच्चे को अपने पिता से मिलने का अधिकार होता है वैसे ही यदि हम आत्माओं को भी परमपिता परमात्मा से मिलने का अधिकार है और यदि उससे भेंट करने के लिये हमारी इच्छा भी तीव्र है तो फिर उससे हमारी भेंट क्यों नहीं हो पाती ? यदि परमपिता परमात्मा से भेंट हो सकने में कोई रुकावट है तो वह रुकावट कौन-सी है और उसको हटाने का पुरुषार्थ कौन-सा है ?

परमात्मा से भेंट करने के लिये परमात्मा पर जीवन की भेंट चढ़ाना आवश्यक

इस विषय में हमारा अनुभव यह कहता है कि परमपिता परमात्मा से भेंट करने के लिए पहले हमें अपने जीवन की भेंट परमात्मा पर चढ़ानी होगी। भले ही हमारा यह वर्तमान जीवन कौड़ी-तुल्य है परंतु जैसा भी है हमें उस सहित मन से प्रभु का हो जाने से ही प्रभु की भेंट का सौभाग्य प्राप्त हो सकता है। कोई व्यक्ति निर्धन हो, रोगी हो, अशिक्षित हो और दुःखी हो परंतु पूर्ण मनसा से परमपिता परमात्मा का हो जाने से वह परमात्मा की कृपा का पात्र हो जाता है; शांति के खज़ाने उसके लिये खुल जाते हैं।

परमात्मा के "**हो जाने**" का अर्थ है परमात्मा के **आज्ञाकारी बच्चे हो जाना।**" परमात्मा के आज्ञाकारी और अर्पणमय बच्चे होने से, परमात्मा हमसे केवल भेंट ही नहीं करेंगे बल्कि अपना सब कुछ हमें भेंट कर देंगे। लौकिक जीवन में भी जब कोई बच्चा अपने पिता की आज्ञा के अनुकूल चलता है तो पिता उसकी सहायता करता है और उस पर न्योछावर भी हो जाता है। इसी प्रकार, हम बच्चे यदि आज्ञाकारी बन जायेंगे और परमपिता परमात्मा पर बलिहार जायेंगे तो परमात्मा भी अवश्य ही हम पर बलिहार जायेंगे।

भक्ति मार्ग में मनुष्य मन्दिरों में जाकर मूर्त्तियों पर पैसा, दो-पैसे भेंट कर देते हैं और तन से भी मन्दिरों में कुछ सेवा कर देते हैं तो उसी अनुपात से ही उनको प्राप्ति भी होती है। परन्तु एक बार अगर आप परमात्मा पर सब कुछ भेंट चढ़ा देंगे तो आप जन्म-जन्मान्तर के लिये मालामाल हो जायेंगे। भेंट चढ़ाने से हमारा यह अभिप्राय नहीं है कि हमें अपना तन, मन, धन किसी मनुष्य को दे देना है। बल्कि हमारा भाव यह है कि हमें मन की लग्न परमात्मा ही से लगानी है तथा तन और धन को भी परमप्रिय परमात्मा ही का समझकर स्वयं निमित्त (Trustee) बनकर, उनकी आज्ञा के अनुकूल इन्हें प्रयोग में लाना है।

परमात्मा शिव को लोग भोग तो लगाते ही हैं। भोग और भेंट एक ही बात है। परन्तु भक्त लोग किसी अन्य वस्तु की भेंट चढ़ाते हैं, वे 'अपनी' भेंट नहीं चढ़ाते। अब हम जब बलि अथवा भेंट चढ़ाने के लिये कहते हैं तो हमारा भाव यह है कि हमें परमात्मा पर **स्वयं को** पूर्णरूपेण बलिहार हो जाना चाहिये।

परमात्मा की बजाय माया से भेंट

अज्ञान काल में मनुष्य ने न जाने कितने विकर्म किये होंगे। न जाने परमात्मा की आज्ञाओं का कितनी बार उल्लंघन किया होगा। परन्तु परमात्मा शिव तो भोलानाथ हैं। वह कहते हैं कि यदि अब भी तुम मेरी शरण आओ तो मैं तुम्हें सब पापों से मुक्त कर दूंगा। परमात्मा के इस आश्वासन को सुनने अथवा पढ़ने के बाद भी यदि कोई मनुष्य परमात्मा से भेंट करने की बजाय प्रतिदिन माया से भेंट करता है तो वह महापापी है, वो महा-अज्ञानी है। अतः यदि कोई मनुष्य परमात्मा से भेंट करना चाहता है तो इसी क्षण से लेकर उसे माया से भेंट करना बन्द कर देना चाहिये। उसे अपने दिल रूपी दरबार में माया का प्रवेश नहीं होने देना चाहिये। आज ही से लेकर उसे अपने पास अपनी दिनचर्या नोट करनी चाहिये। अर्थात अपनी बुद्धि-रूपी विज़िटर्स बुक (Visitors' Book, अभियागत पुस्तिका)

में जांच रखनी चाहिये कि आज ईश्वर ने विज़िट किया या माया ने, अर्थात् आज माया से भेंट हुई या परमात्मा से।

कई लोगों का यह स्वभाव होता है कि जब किसी विशेष व्यक्ति से भेंट करते हैं तो वे अपनी डायरी में उससे ऑटोग्राफ़ (Autograph) ले लेते हैं अर्थात् उस व्यक्ति के अपने हाथों से कुछ लिखवा लेते हैं। आज मनुष्य की दिनचर्या-रूपी डायरी तो माया ही के ऑटोग्राफ़ों (स्वहस्ताक्षरों) से भरी पड़ी है। ऐसी स्थिति में परमात्मा से भेंट करने की गुंजाइश ही कहां है ? आप स्वयं ही विचार कीजिये कि जिस मनुष्य के कपड़े बहुत मैले-कुचैले और दुर्गन्धपूर्ण हों और जिसका सम्बन्ध आसुरी स्वभाव वाले लोगों से हो उसके साथ क्या कोई प्रतिष्ठित व्यक्ति भेंट करना पसन्द करेगा ? ठीक इसी प्रकार, यदि मनुष्य का मन, वचन और कर्म माया के कारण मैला और दुर्गन्धपूर्ण हो और जिसके मन का संग विकारों-रूपी म्लेच्छों से हो, उसकी भेंट क्या परमात्मा से हो सकेगी ? अत: यदि आप परमात्मा से भेंट करना चाहते हैं तो मन, वचन और कर्म की स्वच्छता पर ध्यान दो।

परमात्मा से पुत्र के रूप में भेंट करना चाहते हो या दास के रूप में ?

यदि आप परमात्मा से भेंट करना चाहते हैं तो पहले यह भी सोच लीजिये कि आप परमात्मा से **भक्त रूप** में भेंट करना चाहते हैं या **वत्स रूप** में। आप जानते हैं कि किसी सेठ से उसके नौकर भी भेंट करते हैं और उसके अपने बच्चे भी। परन्तु बच्चों से सेठ जिस वात्सल्य भाव से मिलता है,नौकरों से वह वैसे नहीं मिलता। इसके अतिरिक्त, बच्चों को जो नशा रहता है वह नौकरों को नहीं रहता। इस दृष्टान्त को सामने रखकर आपको पहले यह भी निर्णय कर लेना चाहिए कि परमात्मा के साथ आप किस **सम्बन्ध** से मिलना चाहते हैं ?

इसके अतिरिक्त, यह भी विचार करने की बात है कि आप परमात्मा की **यादगार** से भेंट करना चाहते हैं या **स्वयं चैतन्य स्वरूप और आनन्द स्वरूप परमपिता परमात्मा से ही** ? भक्त लोग तो प्रतिदिन उनकी यादगार अर्थात मूर्त्ति अथवा चित्र से ही भेंट करते हैं। वह चित्र अथवा मूर्त्ति भी याद तो उस चैतन्य की ही दिलाती है क्योंकि यादगार कहते ही उसे हैं जो याद दिलाये। परन्तु प्रश्न यह है कि आप सीधे (Direct) परमात्मा ही से भेंट क्यों नहीं करते ? आप बीच में स्थूल आधार किस लिए रखते हैं ? स्थूल आधार लेने से ही सिद्ध है कि परमात्मा से गहरा स्नेह अथवा घनिष्ट सम्बन्ध नहीं है बल्कि कच्चा स्नेह है। इसलिये हम कहते हैं कि जीवन को परमात्मा की भेंट चढ़ा दो तो उससे पक्की भेंट हो जायेगी अर्थात् उससे पक्का सम्बन्ध अथवा योग जुट जायेगा।

कथनी एक, करनी दूसरी

आप प्रतिदिन कहते हैं कि—"हे प्रभु मेरा तो सब कुछ आप ही का है। यदि सचमुच आप ऐसा ही मानते हैं तो फिर सब कुछ उस ही की भेंट चढ़ाने में देर करने का कारण क्या है ? आपने जीवन में बहुत बार सत्यनारायण की कथा सुनी होगी कि एक मनुष्य ने सत्यनारायण की कथा का प्रण किया था परन्तु कल-कल करते आखिर काल आ गया था। इसलिये, शुभ कार्य में देर नहीं करनी चाहिये।

काल की भेंट

जन्म-जन्मान्तर तो आप अपना सब कुछ काल ही की भेंट करते आये हैं क्योंकि अन्त में काल आकर के सब कुछ छुड़ा ही जाता रहा है। अब भी यदि काल आने से पहले आप परमात्मा को भेंट नहीं चढ़ाते तो सिद्ध है कि आपने अपना सब कुछ काल ही की भेंट चढ़ाने के लिये निर्णय कर रखा है। अफ़सोस है कि आप भेंट भी उस ही को (अर्थात् काल को) करते हैं जो दु:खदायक है। सुख तो परमात्मा ही की भेंट करने से होता है। परमात्मा की भेंट करने से इस जन्म में भी शांति मिलती है और भविष्य में भी जन्म-जन्मान्तर के लिये सम्पूर्ण सुख, सम्पत्ति और स्वास्थ्य प्राप्त होता है। अत: आप परमात्मा को भेंट क्यों नहीं करते हैं ? काल, जिस पर भेंट चढ़ाने से अब भी दु:ख होता है और बाद में भी, आप उसी पर भेंट क्यों चढ़ाते हैं ?

याद रखिये कि एक के प्रति जिस बलि का संकल्प किया गया हो, दूसरा उस बलि को स्वीकार नहीं करता। अत: अब जबकि आपकी इच्छा ईश्वर से भेंट करने की है तो पहले यह प्रण करो कि अब जीवन को माया पर बलि नहीं चढ़ायेंगे बल्कि अब पहले ईश्वर ही पर बलि चढ़ाकर ईश्वर ही के हो जायेंगे। आप जन्म-जन्मान्तर तो काल पर बलि चढ़ते आये हैं, अब आप एक ही बार परमात्मा पर बलि चढ़ायेंगे अर्थात् प्रभु के हो जायेंगे तो बेड़ा पार हो जायेगा।

मनहूस से भेंट न करके महात्मा से भेंट

कोई भी व्यक्ति किसी मनहूस से भेंट नहीं करना चाहता बल्कि महात्मा से ही भेंट करना वह अपना सौभाग्य समझता है। अब आप भी माया रूपी मनहूस से भेंट न करके, महात्माओं से भी महान् जो परमपिता परमात्मा हैं उनसे भेंट करके सदा के लिये सौभाग्यशाली बन जाओ।

जीवन में परिवर्तन

ले. ब्रह्माकुमार ओमप्रकाश, इन्दौर

आज बहुत-से मनुष्य कहते हैं कि अनेक प्रयत्न करने पर भी हमारे जीवन में खुशी और आनन्द की वृद्धि नहीं होती, संस्कारों में कोई विशेष परिवर्तन नहीं आता, पवित्रता और दिव्य गुणों की धारणा नहीं होती और हमारे मन की चंचलता तथा टेढ़ी चाल नहीं छूटती। वह पूछते हैं कि कौन-सी ऐसी सहज युक्तियाँ हैं जिनको अपनाने से हमारा जीवन अलौकिक बन सकता है और उसमें हम आत्मिक सुख का अनुभव कर सकते हैं ?

अब देखा जाय तो ऐसी युक्तियाँ बहुत ही हैं जिनसे कि कर्मों में श्रेष्ठता और स्वभाव में दिव्यता आ सकती है। परन्तु यदि उनमें से हम निम्नलिखित चार को भी विशेष रूप से अपनाने का पुरुषार्थ करें तो भी बहुत कल्याण हो सकता है। यों तो ये बहुत सहज और साधारण प्रतीत होती हैं परन्तु इनका पालन करने से आध्यात्मिक लाभ बहुत होता है। इनमें से ध्यान देने योग्य एक बात तो यह है कि हम स्वयं को प्रभु ही का बच्चा समझें। बस, हर समय यही नशा रहे कि—"मैं तो प्रभु का बच्चा हूं।"

मैं प्रभू का हूँ

आज कोई मनुष्य तो कहता है कि मैं दो बच्चों का बाप हूँ, कोई कहता है कि "मैं तो पंजाब का हूँ", अन्य कोई समझता है कि मैं अमुक सोसाइटी का प्रधान हूँ। इस प्रकार मनुष्य ने स्वयं को इतनी लम्बी-चौड़ी उपाधियां दे रखी हैं और मन की चंचलता के लिए स्वयं ही बखेरा बखेर रहा है। जैसे एक छोटी-सी मकड़ी स्वयं में से बहुत बड़ा जाला निकाल कर स्वयं ही उसमें फँस जाती है, वैसे ही आज के मनुष्यों की हालत है। आज मनुष्य खुद ही संकल्पों का जाल फैलाते हैं और स्वयं ही उसमें फँस जाते हैं। वे कहते हैं—"मैं बाल-बच्चों वाला हूँ, मैं गृहस्थी हूँ, मैं तो बड़ा **तजर्बेकार** हूं।" वे ऐसा भी सोचते हैं कि—"मैं **बेकार** हूँ क्योंकि मेरे जीवन में सुख-शांति रंचक भी नहीं है।" अत: अभी से लेकर इसी स्मृति में रहना चाहिए कि—**"मैं तो प्रभू का हूँ।" जब आप स्वयं को प्रभु का समझेंगे तो आप अपने तन, मन और धन को माया (काम, क्रोधादि विकारों) के काम में नहीं लगायेंगे क्योंकि आप सोचेंगे कि ईश्वर की वस्तु को माया में लगाना तो 'अमानत में खयानत' करना है। इस युक्ति से बुरे संकल्पों को रोकने तथा पवित्र बनने में बड़ी सहायता मिलेगी। जिस माया को दुस्तर माना जाता है, उसे इस अस्त्र-शस्त्र द्वारा एक सैकण्ड में जीता जा सकेगा।**

आप विचार कीजिए कि हिन्दुस्तान और पाकिस्तान की सीमा पर सुरक्षार्थ पहरा देता हुआ एक फ़ौजी सिपाही शत्रु को रोकने के लिए अपने प्राणों की भी जो बाज़ी लगा देता है, उसका कारण क्या है ? आप इसी निष्कर्ष पर पहुँचेंगे कि उसका यह निश्चय कि **"मैं हिन्दुस्तान की तरफ़ का सिपाही हूँ और हिन्दुस्तान में शत्रुओं को न घुसने देना ही मेरा कर्त्तव्य है"**—यह निश्चय अथवा यह स्मृति ही उसे अपने कर्त्तव्य के लिये प्रेरित करती है। इसी प्रकार, यदि कोई मनुष्य इस निश्चय को अपने जीवन का आधार बना ले कि—**"मैं तो प्रभु का हूँ, माया (विकारों) को मन में न घुसने देना ही मेरा कर्त्तव्य है"** तो उसके जीवन में भी पवित्रता अवश्य आयेगी। कार्य-व्यवहार करते हुए यदि यह स्मृति बनी रहे कि **"मैं तो प्रभु का हूँ"**, मैं तो शिव बाबा का बच्चा हूँ तो ममता और आसक्ति नहीं रहेगी और जीवन में महान् परिवर्तन आ जाएगा।

मुझे जाना है

जीवन में आध्यात्मिक परिवर्तन लाने के लिये यह भाव भी स्मृति में रहना चाहिये कि—**"अब तो मुझे जाना है।"** जब किसी मनुष्य के मन में यह संकल्प दृढ़ होता है कि अब तो मुझे गाड़ी पर जाना है तो उसका मन स्टेशन की ओर लग जाता है। तब वह अपना सामान लपेटने और समेटने लग जाता है। इसी प्रकार कोई दुकान पर काम करता हो या किसी दफ्तर में, शाम को जब दुकान या दफ्तर बन्द होने का समय आता है तो घड़ी देखते ही उसके मन में यही संकल्प बस जाता है कि अब तो मुझे जाना है। इसी प्रकार यदि सृष्टि रूपी घड़ी में देखा जाय तो अब कलयुग का अन्त आ चुका है; अब तो सबके अपने घर (परमधाम अथवा परलोक) लौटने का समय है। अत: अब यही धुन सवार होनी चाहिए कि अब तो मुझे जाना है।

जब तक किसी नाव या जहाज का लंगर पड़ा होगा या जब तक वह रस्सी द्वारा तट से बंधा हुआ होगा तब तक नाव

या मुसाफिर चलेंगे कैसे और मंजिल पर पहुँचेंगे कैसे ? इसी प्रकार, मनुष्यात्माएँ मुक्ति के लिए पुकारती तो हैं परन्तु जब तक किसी मनुष्य ने जाने का संकल्प ही नहीं किया है, जब तक उसने बुद्धि का लंगर ही इस संसार से नहीं उठाया है और जब तक उसका मन कर्म-बन्धनों रूपी रस्सियों द्वारा इस संसार से बन्धा हुआ है तब तक वह मुक्ति के पथ पर आगे बढ़ेगा कैसे ? अत: मन में यह पक्की धारणा करनी चाहिए कि मुझे तो (परमधाम) जाना है। जब यह स्मृति स्थिर हो जायेगी कि मुझे तो जाना है तो सारी आसक्ति छूट जायेगी और ममता मिट जायेगी। संन्यासी लोग योग वशिष्ठ सुनाकर जो वैराग्य दिलाते हैं, उसकी बजाय यदि यह धुन सवार हो जाय कि 'मुझे तो अब परमधाम जाना है', तो मोह नष्ट हो जायगा और आचरण श्रेष्ठ हो जायगा।

मुझे न्यारा बनना है

वास्तव में आध्यात्मिक पुरुषार्थ शुरू ही तब होता है जब पहले मनुष्य यह निश्चय करता है कि "मुझे तो न्यारा बनना है ।" जब मनुष्य को इस बात की विस्मृति हो जाती है तब उसका यह पुरुषार्थ भी रुक जाता है। विचार की बात यह है कि वर्त्तमान समय जैसा जीवन है उससे तो मनुष्य संतुष्ट है ही नहीं तो अवश्य ही जीवन को अब न्यारा बनाने की अर्थात् परिवर्तित करने की आवश्यकता है। कहावत भी है कि जीवन को कमल पुष्प के समान 'न्यारा' बनाना चाहिए। जैसे कमल जल में रहते हुए भी जल से न्यारा होकर रहता है, वैसे ही हमें भी संसार में रहते हुए, संसार से न्यारा बनकर रहना चाहिये।

यह एक पुरानी उक्ति है कि "ज्ञानी का जीवन न्यारा होता है।" इस उक्ति का लोग प्राय: यह अर्थ समझते हैं कि ज्ञानी मनुष्य सभ्यता और अदब से उठता-बैठता तथा बोलता-चालता है; उसके कर्मों में ओछापन नहीं होता बल्कि गम्भीरता होती है। परन्तु देखा जाय तो सभ्यता और शिष्टाचार तो कई नास्तिक लोगों में भी होता है। तो प्रश्न उठता है कि ज्ञानी में क्या न्यारापन होता है ?

इस विषय में ध्यान देने योग्य बात यह है कि ज्ञानी भले दूसरे लोगों की तरह ही बैठता है परन्तु वह पृथ्वी पर बैठे हुए होने पर भी बुद्धि द्वारा परमधाम में बैठा होता है। उसका मन इस संसार के विषय-व्यक्तियों पर नहीं बैठता बल्कि प्रियतम प्रभु पर बैठता है। परन्तु अज्ञानी लोग बैठे एक स्थान पर होते हैं किन्तु उनका मन संसार के अनेक व्यक्तियों की ओर भाग रहा होता है। इसी प्रकार, भले ही ज्ञानी भी इन चक्षुओं द्वारा तो शरीर को ही देखता है परन्तु वह साथ-साथ बुद्धि रूपी नेत्र द्वारा अथवा ज्ञान चक्षु द्वारा आत्मा को भी देखता है। उसकी स्मृति में यह रहता ही है कि जो मेरी बात को सुन रहा है अथवा जो मुझे देख रहा है, वह वास्तव में तो आत्मा ही है और मैं भी आत्मा ही हूँ जो कि इस शरीर रूपी रथ में सवार होकर कार्य कर रहा हूँ। इसी प्रकार उसका देखना भी संसार के लोगों से **न्यारा** होता है और वह आत्मा की स्मृति में स्थित होकर बोलता, देखता और सुनता है। इस कारण उसकी दृष्टि, वृत्ति, स्मृति और स्थिति संसार से न्यारी होती है। यह बात बहुत साधारण मालूम पड़ती होगी परन्तु इसकी धारणा से जीवन में महान् अन्तर हो जाता है। मनुष्य भोगी से योगी बन जाता है।

मुझे कर्मयोगी बनना है

ऊपर जो युक्तियाँ बताई गई हैं उनके अतिरिक्त चलते-फिरते यदि इस स्मृति में रहा जाय कि 'मैं तो कर्मयोगी हूँ' तो इससे भी जीवन में पवित्रता आती है। आज मनुष्य कहते हैं कि हम तो गृहस्थी हैं। वे प्रतिदिन आरती गाते हुए कहते हैं—'हे भगवान, हम तो मूर्ख, खल और कामी हैं।' अब अपने बारे में इस प्रकार के शब्द कहने अथवा सोचने की बजाय, इस निश्चय में रहना चाहिये कि—"मैं तो **कर्मयोगी** हूँ ।" अज्ञानी मनुष्य स्वयं को विकारी निश्चय करता हुआ, बार-बार विकारों में गोते लगाता है और कार्य-व्यवहार करते हुए विषय-विकारों को ही याद करता है। अब यदि मनुष्य यह निश्चय कर ले कि—"मैं तो कर्मयोगी हूँ, मुझे तो कर्म करते हुए भी परमात्मा से योग लगाना है" तो उसका जीवन योग-युक्त हो सकता है। यदि वह स्वयं को गृहस्थी (**विकारी** गृहस्थ) मानने की बजाय यह याद रखे कि मैं गृहस्थ **आश्रम** में अर्थात् घर रूपी आश्रम में रहता हूँ तो उसके मन की चंचलता मिट सकती है। इसी प्रकार की सहज युक्तियों से मनुष्य के जीवन में अलौकिक सुख, शांति और ईश्वरीय आनन्द का अनुभव सहज ही हो सकता है। □

खेडब्रह्मा: ब्र.कु. ज्योति, भ्राता काना जी भाई पटेल को राखी बांधती हुई।

बल्लभगढ़ सेवाकेंद्र की ओर से राखी के उपलक्ष्य में जेल में कैदियों को राखी बांधते हुए ब्र.कु. सुदेश बहिन।

भुज-कच्छ: बी.एस.एफ. के जवानों को राखी बांधती हुई ब्र.कु. रक्षा बहिन तथा ब्र.कु. हंसा बहिन।

पूना की सेन्ट्रल जेल में बी.के. उर्मिल कैदियों को राखी बांध रही हैं।

रक्षाबंधन (सचित्र)

रायपुर: रक्षाबंधन के पावन पर्व पर अन्ध-मूक-बधिर विद्यालय में अध्ययन रत नेत्रहीन बालिकाओं को ब्रह्माकुमारी किरण राखी बांधती हुई।

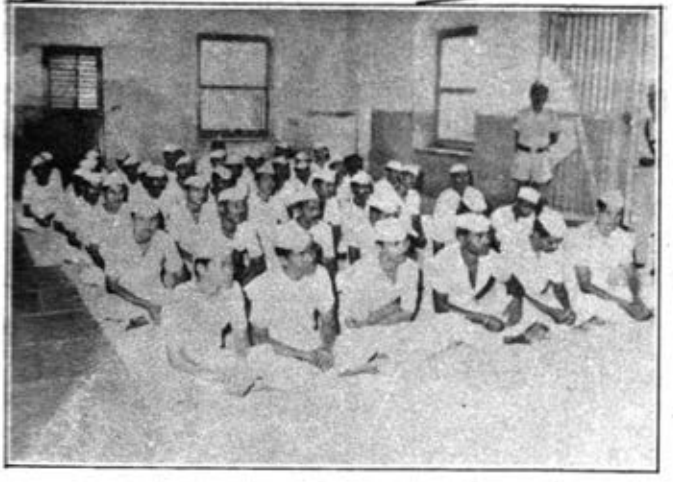

धुलिया: रक्षाबंधन के अवसर पर कैदी बड़े ध्यानपूर्वक ब्र.कु. बहिनों के प्रवचन सुनते हुए।

रांची: मुख्य दैनिक समाचारपत्र 'रांची एक्सप्रेस' का छायाकार एवं पत्रकार भ्राता कुलदीप सिंह जी को ब्र.कु. निर्मला राखी बांधने के पश्चात् प्रसाद देते हुए।

कोडाग्गल- ब्र.कु.पुनया, सर्कल इन्सपेक्टर ऑफ पुलिस को राखी बांधते हुए।

शालीमार बाग (दिल्ली): जन्माष्टी के अवसर पर विशाल शोभा-यात्रा में निकाली गई झांकी 'सर्व के सहयोग से सुखमय संसार' का भव्य दृश्य।

दार्जिलिंग: सुप्रसिद्ध डॉ. भ्राता ओझा को राखी बांधते हुए ब्र.कु. स्वदर्शन जी।

रोपड़: भ्राता जे.आर. कुण्डल, उपायुक्त को ब्र.कु. राज राखी बांधते हुए।

आज़मगढ़: जिला अधिकारी भ्राता राममोहन सिंह जी को राखी बांधती हुई ब्र.कु. दुर्गा।

भीलवाड़ा: ब्रह्माकुमारी बिन्दु पुलिस अधीक्षक भ्राता एम.आर. माहेश्वरी को राखी बांधते हुए।

आगरा: भ्राता हिम्मत सिंह, एस.पी. को बी.के. शांता राखी बांधते हुए।

शादनगर: बी.के. शोभा रीवेन्यू अधिकारी भ्राता डी. नरसिम्हा राँओ को राखी बांधती हुई।

ब्रह्मपुर: बी.के. मंजू, डी.पी. सिंह चौहान, डी.आई.जी. पुलिस, ब्रह्मपुर को पवित्रता की सूचक राखी बांध रही हैं।

मण्डी: क्षेत्रीय राजगार अधिकारी भ्राता देवराज वर्मा को राखी बांधते हुए ब्र.कु. शीला।

राजगानपुर: पुलिस अधिकारी भ्राता उज्जवल चन्द्र जी को चित्रों की व्याख्या करती हुई ब्र.कु. ममता जी।

रॉयगढ़: भ्राता पी.के. दास, जिलाधीश रॉयगढ़ को ब्र.कु. चित्रा स्नेह और पवित्रता की सूचक राखी बांध रही हैं।

जबलपुर में म.प्र. के उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश भ्राता एन.डी. ओझा को ब्र.कु. सरोज राखी बांधते हुए।

सम्बलपुर: भ्राता राजकिशोर पांडा, आर.डी.सी. उत्तरी क्षेत्र को राखी बांधते हुए बी.के. पारवती।

कलकत्ता: हृदय विशेषज्ञ भ्राता बंधन को ब्र.कु. बिन्दु, वुडलैंड नर्सिंग होम में पावन राखी बांधते हुए।

चढ़ती कला— तेरे भाने सरबत दा भला

□ब्र.कु. उर्मिला, चंडीगढ़

कहावत प्रसिद्ध है—''समय की गति बलवान होती है।'' अर्थात् समय किससे क्या करवा लेता है या उसके लिए क्या कर देता है इस पर चर या अचर जगत का कोई जोर नहीं है। समय हमारे लिए कल्याणकारी भी हो सकता है या इसके विपरीत भी। काल-चक्र के मुख्य चार युगों में से सतयुग और त्रेता के प्रथम दो युगों में समय हमारा साथ देता है और हम सम्पूर्ण सुख-शांति का अनुभव करते हैं। परन्तु बाद के दो युगों अर्थात् द्वापर, कलियुग में हवा का रुख बदल जाता है और उत्थान के लिए किया गया हमारा हर प्रयास हमें पतन की ओर ही ले जाता है। इसे ही दूसरे शब्दों में गिरती कला कहा जाता है। परन्तु कलियुग के अंत और सतयुग के आदि काल, संगमयुग में समय पुन: हमारा साथ देता है और द्वापर युग तथा कलियुग में हुई क्षति को भर देता है जिसे हम चढ़ती कला का नाम देते हैं। ''चढ़ती कला तेरे भाने सरबत दा भला'' यह उक्ति प्रसिद्ध है। जिसका भाव है कि जब एक की उन्नत्ति होती है या एक आगे बढ़ता है तो दूसरों पर भी उसका प्रभाव आता है। परिणामस्वरूप सभी का कल्याण और उत्थान हो जाता है।

चढ़ती कला से अभिप्राय है आत्मा के ज्ञान, गुण, शक्ति अनुभव में हर दिन वृद्धि हो जैसे कोई मरीज़ बहुत दिनों से बीमार चल रहा हो और जब इलाज शुरू होता है तो उसकी शारीरिक स्थिति में सुधार आने लगता है; जिसके प्रमाण हैं भोजन पहले से ठीक हो जाएगा, कमज़ोरी दूर होती जाएगी, शरीर के अंगों में कोई तकलीफ नहीं होगी आदि-आदि। इसके विपरीत यदि अवस्था पहले जैसी ही रहती है तो डॉक्टर और दवाई दोनों का परिवर्तन किए जाने के बारे में सोचा जाता है या परीक्षण किया जाता है कि स्थिति न सुधरने के अन्य क्या कारण हैं ? हम आत्माएं भी आधाकल्प से आत्मिक बीमारियों जैसे काम, क्रोध, लोभ, ईर्ष्या, द्वेष, अहंकार, निराशा, कुण्ठा आदि से ग्रसित रही है। अब पिता परमात्मा सुप्रीम सर्जन (Supreme Surgeon) के रूप में ज्ञान योग के डोज़ हमें दे रहे हैं, जिसके परिणामस्वरूप आत्मा की चढ़ती कला होती है। प्रेम, शांति, आनन्द, गुण, ज्ञान, शक्तियां उत्तरोतर बढ़ती जाती है,। उसे हर दिन नवीन लगता है, उमंग उत्साह में रहना उसका संस्कार बन जाता है। हर दिन उसके लिए नई अनुभूति, नई सीख लेकर आता है। समय का हर क्षण उसे देता हुआ प्रतीत होता है मानो पल भी व्यर्थ नहीं है।

प्रश्न उठता है चढ़ती कला कैसे हो ? अनुभव कहता है कि किसी भी चीज़ की वृद्धि, उन्नति, सुन्दरता, स्थायित्व तब बना रहता है जब उसका अपने सोर्स (Sourse) या शक्तिकेंद्र से सीधा सम्बन्ध लगातार जुटा रहता है। उदाहरण के लिए पेड़ के पत्ते, डालियां, टहनियां पनपती रहती हैं क्योंकि उनका बीज के साथ सीधा सम्बन्ध रहता है। इसके विपरीत जिस पत्ते या डाली को बीज से शक्ति मिलनी बन्द हो जाती है उसकी क्या स्थिति हो जाती है, उसको हम सभी जानते हैं। पहले उसमें मुरझाहट आती है, फिर सूखना शुरू होता है और एक दिन उसका अस्तित्व पेड़ से अलग होकर मिट्टी में मिल जाता है। हम आत्माएं भी विशाल सृष्टि-वृक्ष के पत्ते हैं। हमारे अन्दर सर्वगुणों, सर्वशक्तियों रूपी हरियाली तब बनी रहेगी जब इस चेतन झाड़ के बीज रूप निराकार पिता परमात्मा शिव के साथ बुद्धि की लाइन सीधी जुटी रहेगी। इसके विपरीत यह बौद्धिक सम्बन्ध टूट जाने पर आत्मा में उदासी रूपी मुरझाहट पहले आती है फिर अवस्था डांवाडोल होने लगती है। पहले ठहरती कला, फिर गिरती कला होने लगती है और आत्मा समय के वरदान से वंचित होती जाती है।

निरंतर उड़ती कला का अनुभव करने के लिए दूसरी परम आवश्यक बात है आत्मा स्वयं को देखे, स्वचिंतन करे। स्वदर्शन, स्वनिरीक्षण, स्वउन्नति में ही व्यस्त रहे। दौड़ में भी हम देखते हैं कि जो धावक अपने से आगे वाले या पीछे वाले को न देखकर, लक्ष्यबिन्दु को सामने रखकर भागता जाता है, वह सबसे आगे निकल जाता है। आगे या पीछे वालों को देखने से क्रमश: निराशा या निश्चिन्तता जैसे भावों का उसमें प्रादुर्भाव होना सम्भव है। और लक्ष्यबिन्दु के बुद्धि से निकल जाने के कारण पैरों में स्थिरता आ जाती है। हम आत्माओं को पिता परमात्मा से लक्ष्य मिला है सम्पूर्णता का, बाप समान स्थिति का। अत: आत्मा सदैव इसकी याद बनाए रखे, बुद्धि रूपी आँख से इसे ही देखें, इसी का स्मरण और चिन्तन करे, इसकी प्राप्ति के लिए आवश्यक नियमों, धारणाओं, पुरुषार्थ का दृढ़ता से पालन करे तो उसे महसूसता आती है मैं उड़ती जा रही हूँ।

शेष पृष्ठ१७पर

मधुर

□ले. ब्रह्माकुमारी प्रकाश, कानपुर

इस अलौकिक ज्ञान को यथार्थ रूप से समझ कर अपने जीवन में धारण करने से हर एक के जीवन में अलौकिक **मधुरता** अवश्य आती जानी चाहिये, क्योंकि यह ज्ञान है ही माया के कड़वेपन अथवा विष के कांटे को निकाल बाहर करने के लिये। परन्तु यह मधुर अवस्था रह तभी सकती है जब कोई मनुष्य इस अद्भुत सृष्टि-लीला के भेद को जानकर एकरस परमपिता परमात्मा की याद में टिका रहे। जब तक कोई मनुष्य सृष्टि-लीला के भेद को पूरा नहीं समझा है तब तक उसकी अवस्था मधूर नहीं हो सकती, क्योंकि अनेक प्रकार के ऊंच-नीच, निन्दा-स्तुति, मान-अपमान की परिस्थितियां आने से अगर कोई मनुष्य 'भावी' से संतुष्ट नहीं है और उसे देखते हुए भी साक्षी व स्वरूप-स्थित नहीं है तो उसकी अवस्था हर्षित रह ही नहीं सकती।

इसलिये इस याद में रहना है कि—''बनी-बनाई ही हर हालत में बन रही है; अब नई तो कुछ भी बननी नहीं है।" इस अद्भुत सृष्टि-लीला में हर एक मनुष्य अपना अनादि-निश्चित अभिनय (पार्ट; Part) कर रहा है। हम किसी को दोष देकर ईश्वर के दरबार में दोषी क्यों बनें ? हर कोई अपने ही किये कर्मों का फल पाता है। इसलिये किसी पार्टधारी को निन्दा, ईर्ष्या, द्वेष इत्यादि का पार्ट (कर्म) करते देखकर, हमें उससे विकल्पों का आदान-प्रदान (एक्सचेन्ज; Exchange) नहीं करना है बल्कि उसके प्रति मधुर दृष्टि से, हर्षित हृदय से, सदा मुस्कराते हुए ही पेश आना है। हमें खुद (स्वयं) अपने ही कर्मों के लिये ज़िम्मेदार होकर अपनी बिगड़ी को बनाना है। तभी तो 'आत्मा को अपना शत्रु आप और अपना मित्र भी आप' कहा गया है, क्योंकि दूसरों के प्रति बुरा सोचकर स्वयं भी बुरा बनने वाले मनुष्य का अपना भी कल्याण नहीं होता है।''

अतएव अगर कोई व्यक्ति किसी ज्ञानवान मनुष्य के प्रति कड़वी दृष्टि रखता है, उससे कड़वा बोलता है अथवा विघ्नकारक कर्म करता है तो वह ज्ञानवान मनुष्य सोचता है कि—''यह तो मेरे ही कर्मों की भावी अमुक व्यक्ति द्वारा मेरे सन्मुख आ रही है। अगर किसी मनुष्य के भूत (Past) अथवा वर्त्तमान कर्म बिल्कुल ही निर्दोष अथवा श्रेष्ठ हों तो कोई मनुष्य उसकी निन्दा कर ही नहीं सकता, गाली दे ही नहीं सकता और प्रकृति भी कष्ट पहुंचा नहीं सकती और परिस्थितियां या परिणाम विपरीत हो नहीं सकते। यह सब होता इसलिये है कि मनुष्य को अपने ही विपरीत कर्मों की भोगना भोगनी होती है।''

अतः कर्मों की इस गुह्य गति को समझ कर हर्षित हो, साक्षीपन की अवस्था में टिक, सहनशीलता से कर्म-भोग भोगना ही ज्ञानी की रीति है; क्योंकि इन विपरीत परिस्थितियों से तो अपने पापों का बोझ सिर से उतरता जाता है — इससे तो आगे के लिये कल्याण ही होता है।

जो मनुष्य अपने आप से संतुष्ट अथवा प्रसन्न नहीं, वह दूसरे मनुष्यों को भी प्रिय अथवा मधुर प्रतीत नहीं हो सकता। इसलिये पहले तो स्वयं ही में दैवी गुण लाने चाहियें, क्योंकि दिव्य वस्तु ही सुखकारक होने के कारण स्वयं को और अन्य सबको एक न एक दिन अवश्य प्रिय लगती है। अतः मधुर बोलने, मधुर रीति देखने, मधुर चाल चलने और मधुर कर्म (ऐक्ट, act) करने का मतलब ही है—मन, वाणी तथा कर्म का दिव्य होना अर्थात देवता बनना। देखो कौवा भी काला होता है और कोयल भी काली होती है परन्तु कोयल को सभी पसन्द करते हैं और काएं-काएं करने वाले कौवे को सब लोग उड़ा देना चाहते हैं, क्योंकि मीठे बोल ही सबको प्रिय लगते हैं। परन्तु वास्तव में मीठे बोल तो अव्यक्त अवस्था में स्थित हुई ज्ञानी आत्मा ही के हो सकते हैं, क्योंकि उस ही की वाणी कल्याणकारी होती है। इसलिये ज्ञानी अथवा योगी की ही अवस्था 'मधुर' होती है। □

पृष्ठ १६ का शेष

मंजिल मेरे बहुत नज़दीक है। इसी विषय में कई भाई-बहनों का यह प्रश्न होता है कि कैसे मानें यह उड़ती कला का युग है, विश्व-परिवर्तन का समय है ? इसके लिए विचारणीय बात यह है कि अनुभूति स्वस्थिति पर आधारित है। आत्मा की बाह्य स्थूल खिड़कियां आँखें बाह्य जगत के दृश्यों की पकड़ करती हैं, परन्तु उस दृश्य को अभिव्यक्ति आत्मा की अपनी स्थिति के अनुसार मिलती है। जैसे बाहर में अपरिभाषित सौन्दर्य बिखरा पड़ा होने पर भी आत्मा की अपनी स्थिति सुन्दर न होने पर सुन्दरता में भी कुरूपता और व्यर्थता नजर आती है। अतः हर समय चढ़ती कला का अनुभव करने वाली आत्मा को स्वतः ही सर्व की चढ़ती कला का अनुभव होता है। सर्व के परिवर्तन का आभास होता है। अपने साथ-साथ उसे सारा विश्व ही आने वाली नई दुनिया के बिल्कुल नजदीक खड़ा दिखाई देता है। कब, कैसे, कितने समय में आदि प्रश्न उसके समाप्त हो जाते हैं। उसे अपनी उन्नति के साथ-साथ सर्व का कल्याण ही कल्याण नज़र आता है। अतः ठीक ही कहा गया है—''चढ़ती कला तेरे भाने सरबत दा भला।'' □

नारायणपुर (अहमदाबाद) के साधना भवन में स्कूल-कॉलेज में पढ़ने वाली कुमारियों के लिए विशेष 'साप्ताहिक चरित्र निर्माण शिविर' का आयोजन किया गया। चित्र में ब्र.कु. चन्द्रिका बहिन के साथ कुमारियां दिखाई दे रही हैं।

सिरोही: बी.के. मोहिनी, अध्यक्ष लायंस क्लब, भ्राता प्रकाशचंद जैन को राखी बांधते हुए।

होशियारपुर: भ्राता जी.एस. सन्धु, जिलाधीश को ब्र.कु. राजकुमारी राखी बांध रही है।

नयाशहर: सी.आर.पी.के.डी.एस.पी. को राखी बांधती हुई ब्र.कु. कृष्णा।

विशाखापटनम: ब्र.कु. बहिनें अनाथ बच्चों को 'प्रेम समाज' में राखी बांधते हुए।

भिलाईनगर: भ्राता रवि आर्या, विधायक को राखी बांधते हुए ब्र.कु. ऊषा बहन

इलाहाबाद: रक्षाबंधन के शुभ अवसर पर ज्ञानामृत मासिक पत्रिका का अंक देते हुए भ्राता प्रेमशंकर गुप्ता (वरिष्ठ न्यायमूर्ति, उच्च न्यायालय, इलाहाबाद)

फरीदकोट के जिलाधीश भ्राता भूपिन्द्र सिंह सिद्धू जी को राखी बांधती हुई ब्र.कु.प्रेम जी।

मम्दोट (पंजाब) में ब्र.कु. तृप्ता प्रदर्शनी देखने के पश्चात् वहां के सरपंच को ईश्वरीय सौगात देते हुए।

नासिक रोड के जैन भवन में रक्षाबंधन का महत्व तथा 'सर्व के सहयोग से सुखमय संसार' कार्यक्रम पर ब्र.कु. गोदावरी प्रवचन करती हुई।

पुरी: 'सर्व के सहयोग से सुखमय संसार' कार्यक्रम के शुभारम्भ के अवसर प ब्र.कु. निरूपमा, प्रतिमा तथा अन्य गणमान्य व्यक्तियों के साथ।

बारीपदा: बी.के. सावित्री सेवाकेंद्र पर जिला एवं सत्र न्यायाधीश भ्राता निरंजन सेन को स्नेह सूचक राखी बांधती हुई।

महबूबनगर: तालुका गदवाल में आयोजित राखी महोत्सव का उद्घाटन कर रहे हैं—म्यूनसीपल चेयरमैन भ्राता पी. नागराज जी।

ब्र.कु. विमला राखी बांधते हुए।

फतेहपुर नगर दारोगा भ्राता बृजमोहन शर्मा को ब्र.कु. दुलारी राखी बांध रही है।

पणजी (गोवा) लायंस क्लब के डि. डिस्ट्रिक्ट गवर्नर भ्राता व्ही. वाय. पवार जी को राखी बांधते हुए।

रायपुर: भ्राता आर.डी. नन्होरया, मुख्य अभियंता महानदी गोदावरी कछार को पवित्र स्नेह की राखी बांधती हुई ब्र.कु. किरण।

अबोहर: ब्र.कु. पुष्प, एस.डी.एम. स. बाज सिंह भुल्लर को राखी बांधते हुए।

यमनानगर के एस.आई. हस्पताल के अधीक्षक डॉ. श्री अग्निहोत्री जी को पावन राखी बांधते हुए ब्र.कु.कृष्णा जी।

आदमपुर: ब्र.कु. तारादेवी चर्च के फॉदर को राखी बांधते हुए।

सांगली: ब्र.कु. सुनीता जिलाधिकारी भ्राता श्रीधर जोशी को पावन राखी बांधते हुए।

मन द्वारा संचार

□ले.-ब्रह्माकुमारी चक्रधारी, दिल्ली

एक बुढ़िया गर्मी के मौसम में एक गांव से दूसरे गांव जा रही थी । उन दिनों तांगा-रेड़ी और घोड़े-खच्चर इत्यादि यातायात के अतिरिक्त कोई साधन उपलब्ध नहीं थे । बुढ़िया को जाना ज़रूरी था क्योंकि उस गांव से आने वाले किसी व्यक्ति ने उसे समाचार दिया था कि उसका इकलौता बेटा, जो उस गांव में अपने किसी व्यवसायिक कार्य से गया था, सख़्त बीमार हो गया है। बुढ़िया अपने सिर पर एक गठरी भी ले जा रही थी जिसमें उसके अपने कुछ दिन के कपड़े-लत्ते, सत्तु और रोज़ काम आने वाला सामान तथा चादर-चुन्नी आदि थे । इस प्रकार वह गठरी एक काफी बड़ा गट्ठर था । बुढ़िया को ऐसे लग रहा था कि वह गोवर्धन पर्वत उठाकर ले जा रही हो । बच्चे की बीमारी की ख़बर सुनकर उसके दिल की धड़कन पहले ही तेज़ हो चुकी थी. बुढ़ापा अपना रंग दिखा रहा था । गर्मी आफ़त की पड़ रही थी । कमर तो उसकी झुकी ही हुई थी । गरीबी इतनी कि टांगे-रेड़े का वह भाड़ा नहीं दे सकती थी और कुछ ज़रूरी सामान तो उसे ले ही जाना था क्योंकि यह भी नहीं मालूम था कि कितने दिन लग जायेंगे । थोड़ा चलती और रास्ते में रुक जाती । वृक्ष के नीचे किसी थले पर गठरी उतारकर रख देती और दम ले लेती । परंतु दोबारा कोई गठरी उठाकर सिर पर रखवाने वाला न मिलता। इस प्रकार वह किसी अन्य यात्री के लिए रुक जाती । रुकने पर उसे चिंता हो जाती कि देर हो रही है, उसे जल्दी अपने लाडले के पास पहुंचना चाहिए । फासला अभी काफी था और वह सोच नहीं पा रही थी कि क्या करे ?

इसी बीच जब वह गठरी उतारकर एक थले पर बैठी थी तो सामने से एक खच्चर वाला व्यक्ति गुज़रा।

बुढ़िया ने आवाज़ लगाई—"ओ भैया, खच्चर वाले, अरे भाई, तुझे भगवान ने भेजा है । तू जीता रहे बेटा, तेरी उम्र बड़ी हो । तेरी बीवी और बाल-बच्चे सुखी रहें । बेटा, तेरी उम्र का एक मेरा भी लाडला है । वह सुल्तानपुर गांव में कुछ धंधा देखने गया था परंतु ख़बर आयी कि वह वहां सख़्त बीमार हो गया है। अब...

यह कहते-कहते बुढ़िया का हौसला टूट गया । उसका दिल भर आया । आंखों से आंसू बहने ही वाले थे कि उसने अपने को सम्भाल लिया और मिन्नत के लहजे में हाथ उठाती हुई बोली—"अब मुझे लाडले के पास पहुंचना ज़रूर है। उसका मुखड़ा देखूंगी तभी चैन पड़ेगा । लेकिन यह गठरी क्या, पूरा गोवर्धन है । बेटा, तेरा खच्चर तो खाली जा रहा है, तू इस गठरी को अपने खच्चर पर रख के आज पुण्य कमा ले । बुढ़िया का आशीर्वाद मिलेगा । उठा ले बेटा, अरे न माने क्या ?"

खच्चर वाला, जो बुढ़िया के बुलाने पर 2 मिनट यह सोचकर रुक गया था कि एक सवारी मिल गई है और अच्छे पैसे बन जाएंगे । बुढ़िया की बात खत्म होते-होते ही यह कहते हुए चल पड़ा—"बुढ़िया, यह मुफ़तलाल की कम्पनी का खच्चर नहीं है। गठरी से पैसे निकालकर हवा लगवा । यह खच्चर पैसे के बिना मेरी भी बात नहीं मानता ।" अरे, चल बे—ऐसा कहते हुए वह ताना मारकर अपने खच्चर को अपने टखने की चोट से चलने का निर्देश दे आगे बढ़ गया ।

बुढ़िया बेचारी मन मसोसकर रह गई । एक और बूढ़ा वहां से निकल रहा था, उसकी मदद से गठरी-गोवर्धन फिर से सिर पर रखकर फिर चल पड़ी । धीरे-धीरे वह जूं की रफ्तार से आगे बढ़ रही थी । अभी थोड़ा ही आगे गई थी कि उसने देखा कि खच्चर वाला, जो अपने वाहन को सरपट दौड़ाकर काफी आगे निकल गया था, मुड़कर वापस आ रहा है।

खच्चर वाले ने इसी बीच यह सोचा था कि बुढ़िया तो बुढ़ापे से ही दबी जा रही है, इतने बड़े गट्ठर में कुछ तो माल होगा । अगर मैं बुढ़िया की बात मान लेता और गट्ठर लेकर उसे यह कहकर भाग जाता कि मैं यह गांव में ले जाता हूं और वहां तुम्हें दे दूंगा तो बुढ़िया ज़रूर मान जाती और फिर गट्ठर तो मेरे ही कब्ज़े में होता । बुढ़िया मेरा क्या कर लेती ? न वो मेरे पीछे भाग सकती न मुझे ढूंढ़ सकती । अभी ही देखो न कि आंख की झपक में वह कहां रह गई और मैं कहां निकल आया। मैंने तो गलती की जो उसे इन्कार कर दिया वरना तो आज मौज बन जाती । यह सोचकर वह वापस लौटा और बोला—"बुढ़िया, ओ बुढ़िया, तेरी हालत देखकर यहां से जाते-जाते मेरा मन पिघल उठा और तेरी बातें सुनकर विचार आया कि बुढ़िया की सहायता करनी चाहिए। इसलिए लौट आया हूं। ला, तेरी सेवा कर दूं। गठरी खच्चर पर धर के ताकि गांव तक छोड़ आऊं।"

उसे वापस मुड़ता देख बुढ़िया के मन में भी यह ख़्याल आया था कि अब यह लौटकर मेरे पास ही आ रहा है। उसके मन में

आवाज़ उठी कि अब इसकी नीयत खराब हो गई है और यह समझता है कि बुढ़िया की गठरी लेकर भाग जाऊंगा। इसमें मनुष्यता की बजाए आसुरियता आ गई है। अत: यद्यपि बुढ़िया को मदद की सख्त ज़रूरत थी तो भी उसने खच्चर वाले की बात के जवाब में कहा—"बेटा, अब यह गठरी मैं तुम्हें नहीं दूंगी। तुम्हारे मन में अब जो संकल्प उठा है, तुम्हारे यहां पहुंचने से पहले ही वह मेरे पास पहुंच चुका है। तुम्हारे शब्द भले ही कुछ भी हों, भाव मैं समझ गई हूं।" यह कहकर उसने खच्चर वाले को शर्मिंदा कर दिया और वह अपना-सा मुंह लेकर वापस चल दिया।

कहने का भाव यह है कि अगर हमारा अपना मन साफ हो तो दूसरे चाहे चालाकी से कोई भी शब्द प्रयोग करें, उसके भाव तो हम तक पहुंच ही जाते हैं। भावों को एक-दूसरे तक पहुंचाने के लिए जरूरी नहीं कि हम भाषा का प्रयोग करें। हमारी विचार तरंगें वैज्ञानिक साधनों से पहले ही दूसरों तक पहुंच जाती हैं। इसी बात का महत्व बताते हुए बाबा हमसे कहते हैं कि आप शुभ-भावना, शुभकामना से और मनसा से भी दूसरों की सेवा कर सकते हो। □

पृष्ठ २३ का शेष

नशा करें तो कैसा करें ?

देखकर ही हम कहते हैं कि वह नशे में है।

अत: बाबा ने जो दो युक्तियां बताई हैं, वे भी हमें ऐसी स्थिति में ले जाती हैं जो आम मनुष्यों की स्थिति से भिन्न होती है और हमारी अपनी भी आम स्थिति से भिन्न होती है। वह स्थिति हमें खुशी, उत्साह, उमंग इत्यादि में ले जाती है। हमारे वर्तमान के अंधकार को मिटाने के लिए बाबा ने कहा है कि आप यह सोचो कि "हम इस पुरुषोत्तम संगमयुग के सच्चे ब्राह्मण हैं। हम ही सच्चे पाण्डव अथवा शिव शक्तिसेना हैं। जिन योगियों अथवा फरिश्तों का गायन है, वे हम ही तो हैं। हमें भगवान मिल गया तो सब-कुछ मिल गया। हमने उसका प्यार पा लिया, इसलिए हमारा जीवन धन्य है। हमारा यह जो जीवन है, इसी पर ही सब शास्त्र बने हैं..."

भविष्य के बारे में बाबा ने कहा है कि आप यह सोचो कि "मंदिरों में जो देवताओं की मूर्तियां स्थापित हैं, वे हमारे ही भविष्य के रूप हैं। हम ही मनुष्य से देवता अथवा नर से नारायण बनने वाले हैं। ईश्वरीय जन्म लेने के फलस्वरूप और पवित्र बनने के कारण हम ही 21 जन्म के लिए स्वर्ग के सुखों के अधिकारी बनने वाले हैं। सफलता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है।..."

इससे मन प्रभावित होकर तन को भी प्रभावित करता है जिससे जीवन में नया उमंग, नया उत्साह भर जाता है, आत्मविश्वास पैदा होता है। निराशा का स्थान आशा ले लेती है। वर्तमान और भविष्य उज्ज्वल प्रतीत होते हैं और मनुष्य में इतनी खुशी पैदा हो जाती है कि स्थूल नशे उससे स्वत: ही छूट जाते हैं। यह नारायणी नशा वह नशा है जिसमें कोई नुकसान ही नहीं। □

लखनऊ: आदर्श कारागार में कैदियों को राखी बांधती हुई बी.के. सती बहन।

दुर्ग के महापौर भ्राता शंकरलाल जी को आध्यात्मिक चित्र प्रदर्शनी समझाती हुई ब्र.कु. रंजना बहिन।

नशा करें तो कैसा ?

□ब्रह्माकुमारी सुधा, शक्ति नगर, दिल्ली

आजकल पत्र-पत्रिकाओं में नशे के बारे में खूब चर्चा हो रही है। स्कूलों और कॉलेजों के बच्चों में नशे की आदत को फैलते देखकर बुजुर्ग भी चिंतित हो उठे हैं । कस्टम वाले करोड़ों रुपये के नशीले पदार्थ स्मगल करते हुए लोगों को आए दिन पकड़ते हैं । अत: सरकारें भी इस समस्या को बहुत गम्भीर मानने लगी हैं । नशे के पदार्थ न बिकें—इस पर अनेक प्रकार की पाबंदियां लगाई जा रही हैं और लोग इसका सेवन न करें—इसके लिए भी कई यत्न किये जाते हैं परंतु फिर भी यह आफत बढ़ती ही जा रही है।

आखिर मनुष्य नशा करता क्यों है ?—जब तक हम इस समस्या का कारण नहीं समझेंगे, तब तक उसका निवारण कैसे करेंगे ? कानून बनाकर लागू करने से, पुलिस की कार्रवाई करने से या नशा करने वालों को नशे की बुराई बताकर रोकने से तो यह आग, जो हमारे नौजवानों को अपनी लपेट में लेती जा रही है, रुकेगी नहीं । आज सड़कों पर जगह-जगह बोर्ड लगे हैं जिनमें नशे की तुलना मकड़ी के जाल से, अग्नि से व असहाय अवस्था से की गई है और कहा गया है कि नशा छोड़िए । नशा करने वाले इन बोर्डों को देखते भी हैं परंतु अब तो वह आदत ही उन्हें ऐसे पकड़ चुकी है कि भले ही वे उस आदत को छोड़ना चाहते हैं, वह आदत ही उन्हें नहीं छोड़ती । सवाल फिर वहां ही आकर रुकता है कि मनुष्य नशा करता क्यों है और अब वह उससे छूटे कैसे ?

प्राय: देखा गया है कि नशा या तो वे लोग करते हैं जिनके जीवन में कोई बहुत बड़ा अभाव है, असंतोष है, सदमा है या मन को दु:खी करने वाली निरंतर परिस्थितियां बनी हुई हैं और या उनके मित्र-संबंधी व समाज उनसे स्नेह या सम्मान का व्यवहार नहीं करता । वे इस परिस्थिति का सामना करने में स्वयं को अक्षम अनुभव करते हैं और इसको न सह सकने के कारण वे नशा कर लेते हैं ताकि इस वास्तविक दुनिया को भुलाकर वे कुछ समय के लिए स्वप्नलोक में पहुंच सकें।

दूसरे, कुछ लोग अपने दोस्तों अथवा संगी-साथियों के कहने पर पहली बार संकोचवश या उनके दबाव में आकर कुछ ले लेते हैं और फिर परहेज़ न रहने पर धीरे-धीरे वे कभी स्वेच्छा से, कभी किसी के कहने पर उस पदार्थ को लेते-लेते उस आदत के गुलाम हो जाते हैं ।

अत: जब हम किसी को कहते हैं कि आप नशा करना छोड़ दो, यह मकड़ी का जाल है, आग है, इसमें मत पड़ो। तब हमें यह भी सोचना चाहिए कि इसके जीवन में जो अभाव, सदमा, दु:ख, आत्मविश्वास की कमी या हीनभाव है, उससे मुक्त होने का भी तो हम इसे कोई तरीका बताएं । और फिर, आगे के लिए कोई इसे ऐसा भी तो नशा दे दें कि ये मस्त रहें, खुश रहें और परिस्थितियां चाहे कैसी भी आएं, वो इसे झंझोड़ न सकें।

हम देखते हैं कि मनुष्य नशा तो इसीलिए करता है कि उसे कोई खुशी मिले और वह इस थकावट और उदासी की दुनिया को भूल जाए और वह कुछ नए स्वप्न ले सके । तो अवश्य ही उसको हमें कोई ऐसा उपाय भी बताना चाहिए कि वह इस दु:खमय दुनिया में रहते हुए भी उस सुखमय नये संसार के साकार होते हुए स्वप्न देख सके । अगर अभी उसकी परिस्थितियां कोई आदर्शमय नहीं हैं तो कम-से-कम वह आने वाले समय में तो आदर्श की झलक देख सके और उसे अपने उज्ज्वल भविष्य की आशा हो सके । यदि किसी मनुष्य को वर्तमान समय भी अंधेरा दिखाई देता है और भविष्य भी अंधकारमय प्रतीत होता है और इन दोनों प्रकार के अंधकार को मिटाने का उसके पास न तो कोई उपाय है, न कोई आशा, तब तो वह नशे से ही अपने गम को मिटाना चाहता है । यद्यपि इससे उसका वर्तमान और भविष्य और ज्यादा तामस-आच्छादित होता है।

अत: दो प्रकार के उपाय हैं जो एक नए प्रकार की यथार्थ मस्ती व वास्तविक खुशी को देकर अंतोगत्वा दु:ख में धकेलने वाले नशों की दलदल से मनुष्य को निकाल सकते हैं ।

इसलिए शिवबाबा ने हमें दो प्रकार के रूहानी नशे बताये हैं जिनसे मनुष्य की कोई हानि नहीं होती । बल्कि वह दिनोंदिन उन्नति के मार्ग पर अग्रसर होता है । उन दो प्रकार के नशों को समझने के लिए हमें पहले यह जानने की जरूरत है कि वास्तव में नशा मन की एक स्थिति विशेष का नाम है। मनुष्य जो स्थूल नशे लेता है, वे भी उसके शरीर को प्रभावित करके उसके मन ही को प्रभावित करते हैं । जब उसका मन उस विशेष हालत में होता है, तभी हम कहते हैं कि वह नशे में है। वह नशे की स्थिति आम व्यक्तियों की स्थिति से अथवा उस मनुष्य की अपनी आमतौर की स्थिति से भिन्न हुआ करती है। उस भिन्नता को

शेष पृष्ठ २२ पर

मेरा अनुभव

मधुबन में क्या देखा ?

□ किशन दत्त 'तूफान', दिल्ली

अजब समां है अजब है बहार मधुबन में,
चली है आज हवा इत्रबार मधुबन में।

गुलों की शोखियां, देखो तो जान जाती है,
बहार खुद के तेवर पे मुस्कराती है।

हरेक फूल से मिलता है शांति का संदेश,
हरेक चेहरा है या है राजयोग का उपदेश।

यहां पे भारती तहज़ीब झिलमिलाती है,
सुकूनो-अमन की तस्वीर जगमगाती है।

सही जो हिंदू का मतलब यहीं पे मिलता है,
विश्व धर्म का लोटस यहीं पे खिलता है।

नहीं है फर्क यहां पर किसी के भी माबेन,
हर एक रूह है बस एक ही पिता की देन।

बसे हैं बस यहीं परमात्मा शिवबाबा,
मिलेगी एक दिन हर आत्मा शिवबाबा से।

जो ब्रह्मा जी की सृष्टि का है यही आधार,
उसी की हर तरफ सूरत उसी का है आकार।

भवन ये बाबा के बच्चों के वास्ते है बना,
हरेक आत्मा को इसमें है बड़ी श्रद्धा।

सृष्टि बाबा की सारे जहान में फैले,
जमीं तो खैर जमीं आसमान में फैले।

यही जो रंग रहा और रहा यही तेवर,
जहां की एक ही डोरी में ये बंधेगा बशर।

हरके आत्मा अपना स्वरूप जानेगी,
हरके आत्मा को अपना ही मानेगी। □

गीत

हे महामानव—

ब्र.कु. चन्द्रकला, जयपुर

सारा जग हो रोशन तुमसे,
ऐसा तुम प्रकाश बनो।
चमक उठे हर मानव का मन,
जीवन के सन्ताप हरो।
सारा जग हो...

●कदम तुम्हारे ऐसे हों,
माया के पग भी थर जाएं।
कंटक राहों पर चलते,
निज मन में सुमन बिछा पाएं।
जन-जन का विश्वास बढ़े,
ऐसी तुम चट्टान बनो...
सारा जग हो...

●चाल तुम्हारी ऐसी हो,
बदचलन सभी की मिट जाए।
मिले चेतना राही को,
सबका जीवन खिल जाए।
ठुकरायों को प्यार मिले,
ऐसा तुम आधार बनो...
सारा जग हो...

●कर्म तुम्हारे सारे जग के,
निर्बल बन्धन तोड़ सकें।
मायावी मानव माया से,
अपना मुखड़ा मोड़ सकें।
साहस बढ़े अबलाओं का
ऐसा तुम संसार रचो...
सारा जग हो...

●मन की वीणा में गूंजे,
सच्चाई का हर पल नारा।
टूट सके हिंसा की बेड़ी,
धर्म बने सबका प्यारा।
कलियुग के इस विकट काल में,
रूहों का वरदान बनो...
सारा जग हो... □

माऊंट आबू: बी.के. शशि भ्राता प्रीतम सिंह एस.डी.एम. को राखी बांधते हुए।

जगदलपुर: कमिश्नर भ्राता संपतराम जी को ब्र.कु.शोभा आत्म-स्मृति का तिलक देते हुए।

बरनाला में ओ.पी. टुटेजा, ई.ओ. को ब्र.कु. बृज राखी बांधते हुए।

देहली (लाजपत नगर): ब्र.कु. चन्द्रा भ्राता गुजराल जी, अध्यक्ष दिल्ली विद्युत प्रदाय संस्थान को राखी बांधते हुए।

राखी का सचित्र समाचार

जोधपुर: केन्द्रीय कारागृह के कार्यकारी जेलर कृष्ण सिंह तंवर को राखी बांधते हुए ब्र.कु. फूल।

धार: ब्र.कु. सुधा भ्राता एस. व्ही. अय्यर (कलेक्टर) को पवित्रता की सूचक राखी बांध रही है।

जालंधर: सत्य साई बाबा के मंदिर में साई समिति पंजाब के प्रधान भ्राता विनय कपूर को ब्रह्माकुमारी राज राखी बांध रही है।

बांदा में भ्राता प्रीतमपाल सिंह, वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक को राखी बांधने के पश्चात ब्र.कु.दुलारी तथा अन्य चित्र में दिखाई दे रहे है।

लातूर: रक्षाबंधन के कार्यक्रम पश्चात् मूक बधिर बच्चों को बहनें राखी बांध रही हैं।

डिब्रूगढ़: भ्राता एल.पी. दत्ता, पूर्व उपकुलपति डिब्रूगढ़ विश्वविद्यालय को राखी बांध रही हैं ब्र.कु. अंजू जी।

जबलपुर सेन्ट्रल जेल में ब्र.कु. प्रभा कैदियों को राखी बांधते हुए।

मंगलोर: भ्राता वीरभद्रा स्वामी, जेल अधीक्षक को ब्र.कु. बहिन राखी बांधते हुए।

भिवानी के एस.एस.पी. भ्राता बृजिन्द्र राँय को ब्र.कु. नारायणी बहन राखी बांधती हुई।

जालंधर: ज़िला कांग्रेस कमेटी के प्रधान भ्राता धर्मपाल सहगल को ब्रह्माकुमारी राज राखी बांध रही है।

धर्मशाला: बी.के. उमा डी.सी.पी.सी. डोगरा जी को राखी बांध रही हैं।

जालंधर के डिप्टी कमिश्नर भ्राता सुधीर मित्तल जी को ब्रह्माकुमारी कृष्णा राखी बांध रही है।

चित्तूड़ (आ.प्र.): जिला न्यायाधीश भ्राता बेय्यपा रेड्डी को ब्र.कु. गीता राखी बांधते हुए।

देहली (लक्ष्मी नगर): ब्र.कु. पुष्पा नेत्र विशेषज्ञ डॉ. बी.एस. सेठ को पावन राखी बांधते हुए।

बिलासपुर: मंडल रेल प्रबंधक भ्राता आर.एस. ठाकुर जी को राखी बांधते हुए ब्र.कु. गीता बहिन।

सोनीपत: उपायुक्त भ्राता एल.एस.एम. सालिन को ब्र.कु. जनक राखी बांधते हुए।

पाली: ब्रह्माकुमारी कमल सुंदरी पाली जिलाधीश भ्राता अतुल कुमार गर्ग को राखी बांधते हुए।

गुराया में हरभजन सिंह तेग चेयरमैन मार्केट कमेटी को राखी बांधते हुए ब्र.कु. इन्द्रा।

नयी दिल्ली: बी.के. मधु भ्राता महेश्वर दयाल, सचिव, भारत सरकार, को राखी बांधती हुई।

मिर्ज़ापुर: सी.ओ. पुलिस चुनार, भ्राता शिवरामदास जी को ब्रह्माकुमारी कमलेश राखी बांध रही है।

रायपुर: माननीय म.कृ. आलकरी, ज़िला अभियंता (दूरभाष) को ब्र.कु. किरण पावन सूत्र राखी बांधते हुए।

श्रीरामपुर (प. बंगाल): ब्र.कु. सौभाग्य एस.डी.ओ. भ्राता कायस्थ को राखी बांधते हुए।

अम्बाला शहर के विधायक भ्राता शिव-प्रसाद जी को राखी बांधती हुई ब्रह्माकुमारी सरोज जी ।

सीहोर: नगर के विधायक भ्राता श्री शंकरलाल साहू को ब्र.कु. सन्ध्या राखी बांधते हुए।

तांडुर: ब्र.कु. जगदेवी तांडुर सीमेंट कार्पोरेशन ऑफ इन्डिया के मुख्य प्रबंधक भ्राता जी. विट्ठल को पवित्रता की सूचक राखी बांधते हुए।

छतरपुर में जेलर साहब को ब्र.कु. सन्ध्या राखी बांधते हुए।

लुधियाना: सरपंचों एवं ग्राम सेवकों के साथ गांव विकास अधिकारी को ब्र.कु. सरस राखी बांधते हुए।

"सेवा का बल"

□बी.के. सूरज कुमार, माऊंट आबू

जो सेवा स्वयं के लिए सुखदाई हो, वही दूसरों के लिए भी सुखदाई होगी और उसे ही सच्ची सेवा कहा जाएगा। परन्तु जो सेवा जीवन को संघर्षमय बना दे, मन को भारी कर दे तथा जीवन में शुष्कता ला दे, वह सेवा ईश्वरीय सेवा नहीं कहलाती। ईश्वरीय सेवा वही सेवा है जो सेवा करने वाले को ईश्वरीय रस व ईश्वरीय बल प्रदान करे और दूसरों को ईश्वर के समीप लाये, दूसरों को ईश्वरीय पथ का अनुगामी बना दे। जो सेवा वातावरण को अलौकिक न बना पाये, वह सेवा सांसारिक सेवा जैसी ही है।

आज तक ईश्वरीय कार्य में सहभागी बनने के लिए हज़ारों भाई-बहने अपना सर्वस्व कुर्बान कर चुके हैं और ऐसे ही लाखों लोग तन, मन, धन से इस दिव्य कार्य में सहयोगी बने हुए हैं। परन्तु देखना यह है कि ईश्वरीय सेवा का सुख कितनों को मिला है व ईश्वरीय सेवा में जीवन बलिदान करके जीवन सन्तुष्टता की राह पर कितना आगे बढ़ा है ? सर्व को पावन बनाने की सेवा करने वाले स्वयं कितने पावन बने हैं और दूसरों को राजयोग का पथ दिखाने वाले स्वयं कितने योगी बने हैं ? यदि यह सब-कुछ नहीं है तो अच्छी तरह जान लेना चाहिए कि कोई बात छूट रही है।

सेवा का प्रत्यक्ष फल है—'बल'

सेवा करते ही आत्मा आन्तरिक बल व खुशी का अनुभव करे, यही सेवा की सफ़लता है व सेवा का बल है। ईश्वरीय सेवा भी आत्मा को अनुभवी एवं शक्तिशाली बनाती है। बल्कि यह कहना अतिश्योक्ति न होगी कि ईश्वरीय सेवा ही सर्व गुण-सम्पन्न बनने का आधार है। परंतु यदि रात-दिन सेवा करके भी आत्मा स्वयं को निर्बल महसूस करती है या जीवन में आनंद लहरें नहीं मारता, तो समझना चाहिए कि सेवा का सच्चा स्वरूप अभी ज्ञात नहीं है।

सभी सेवाधारी खुशी से व स्वेच्छा से ही इस पथ पर कदम बढ़ाते हैं और सभी की इच्छा भी ईश्वरीय कार्य में दिल से सहयोगी बनने की ही होती है। परंतु तन, मन, धन से सेवा करते हुए यदि सूक्ष्म वृत्ति में भी यह एहसास होता है कि मैंने इतना किया तो सेवा का बहुत सारा बल समाप्त हो जाता है।

मान लो रात-दिन कोई तन से सेवा कर रहा है, सच्चे मन से भी कर रहा है, परंतु वह अपनी सेवा का यहां-वहां वर्णन करता रहता है, अपनी सेवाओं का बखान करके वह सभी की प्रशंसा पाना चाहता है, ठीक है उसे प्रशंसा तो मिल जाएगी परंतु सेवा का बल समाप्त हो जाएगा। क्योंकि बाह्यमुखी होते ही ईश्वरीय सुख जाता रहता है। इसलिए प्राचीन काल से चली आ रही ये कहावत, ''नेकी कर दरिया में डाल'', हमें अपना लेना चाहिए। गुप्त सेवा करें, उसका गुप्त बल प्राप्त होगा। सभी हमारी सेवाओं को जानें—यह संकल्प बाह्यमुखता व अल्प ज्ञान का है। क्यों न हम यह सोचें कि जिसकी हमने सेवा की, उसे सब ज्ञात है। मुख से वर्णन करना तो दूर, हमें कर्त्तापन का अहम् भी न हो।

इसी प्रकार कोई व्यक्ति वाचा की सेवा करता है। मान लो किसी ने अति सुंदर भाषण किया या कोई लेख लिखा या अनेक आत्माओं को ईश्वरीय पथ पर लाया तो उनको अनेक आत्माओं का आशीर्वाद प्राप्त होता है। परंतु यदि यह बात मुख पर आती है कि मैंने यह कार्य इतना सुंदर किया या ये कार्य मेरी योजना, योग्यता या विवेक के कारण ही सफल हुआ या मैंने इतना अच्छा या सूक्ष्मता से ज्ञान दिया तो ये सब संकल्प ईश्वरीय बल को समाप्त कर देते हैं और साथ-साथ दूसरों की भावनाओं को भी बदल देते हैं। सत्यता तो यही है कि सब-कुछ ईश्वरीय प्रेरणाओं व ईश्वरीय शक्तियों के द्वारा ही होता है। ज्ञान भी उसी का है व कार्य भी। यदि उसने हमें मौका दिया है तो हमें निशि-दिन उसका शुक्रगुज़ार ही होना चाहिए।

यही सिद्धांत धन की सेवा का भी है। सर्वस्व लगाकर भी यदि किसी के मन में, ''मैंने इतना धन दिया'', यह कुरूप संकल्प रहता है तो न उसका धन ही सफल होता है और न उसके द्वारा की गई सेवा। जिन मनुष्यों की पालना उस धन से होगी, उन्हें भी कष्ट होगा और देने वाले का भाग्य भी नहीं बनेगा। इसलिए एक हाथ दे तो दूसरे को पता भी न चले—यही धारणा धन-सेवा का बल प्राप्त कराती है।

इसी प्रकार सेवा करके कई लोग तुरंत उसका कच्चा फल खाना चाहते हैं, मान-शान नाम के रूप में, यह भी अयथार्थ विचार है। या धन देकर सेवा पर हावी होने की प्रवृत्ति भी महानता नहीं है। दो और भूल जाओ। दो और कुछ भी लो

नहीं । दो और हल्के बने रहो—यही सच्ची सेवा है।

दिल से की गई सेवा ही बल-दायक

हम सब सदा ही ये ईश्वरीय महावाक्य सुनते हैं कि दिल से सेवा करने वालों को सबकी दुआएं मिलती हैं और दिलाराम भगवान उन पर राजी होता है और दिमाग से की गई सेवाएं वाह-वाह दिलाती हैं । इसका अर्थ यह नहीं कि दिमाग से सेवाएं न की जाएं । वास्तव में जिस सेवा में दिल व दिमाग दोनों का संतुलन हो, वह सेवा श्रेष्ठ फल देने वाली है। हम जो कुछ भी करें, दिल से करें, दिखाने के लिए नहीं । जहां दिखावा है, वहां फल भी दिखावा मात्र ही प्राप्त होगा । परंतु हमें यह ध्यान अवश्य रहे कि हमारा दिमाग सेवा में इतना न लग जाए कि दिमाग में दिलाराम बाप भी न बैठ पाए । क्योंकि सेवा में जहां केवल दिमाग का प्रयोग है, वहां शुष्कता है, वहीं टकराव है और जहां सेवा दिल से की जा रही है, वहां दिल को सच्चा आराम प्राप्त होता है।

अत: जो भी कार्य हमें मिले, चाहे छोटा हो या बड़ा, नाम बाला करने वाला हो या गुप्त, कोई जाने या न जाने, हम दिल लगाकर करें । दिल लगाकर कार्य करने वाला व्यक्ति कभी भी गैर-ज़िम्मेदारी नहीं दिखाता। वह किसी कार्य को अधूरा नहीं छोड़ता । वह कुछ दिखावे का प्रयास भी नहीं करता । ऐसी सेवा से ही अति श्रेष्ठ बल प्राप्त होता है और यह सच्चे मन से की गई सेवा ही मन का सच्चा सुख भी देती है।

सेवा-क्षेत्र पर ज्ञान-युक्त व योग-युक्त स्थिति का संतुलन हो—

हमारी सेवा ईश्वरीय सेवा है, इसलिए यह सेवा यदि ईश्वरीय ज्ञान व योग से खाली है, तो अधूरी है। सेवा के मैदान पर वही आत्मा सम्पूर्ण सुखी है व सम्पूर्ण सफल है जिसे सूक्ष्म ज्ञान की भी खुमारी चढ़ी हो और योग की भी तार जुड़ी हो । परंतु जो सेवाधारी इन दोनों के बिना सेवा करते हैं उनके लिए सेवा भी भारी बन जाती है और वे भी दूसरों के लिए भारी बन जाते हैं । और यह स्थिति इस जीवन के लिए भयंकर अभिशाप है।

ज्ञान-युक्त व योग-युक्त स्थिति दो पटरियां हैं और साहस व आत्मविश्वास दो पहिये हैं, इन पर ही हमारी जीवन-रूपी गाड़ी तीव्रता से दौड़ती है। यदि इनके बिना, केवल सेवा द्वारा हम स्वयं को महान् बनाना चाहें, तो काम काफ़ी कठिन होगा । वास्तव में वह सेवा भी क्या जिसमें ज्ञान-योग नष्ट हो जाए और वह जीवन भी क्या जिसमें ज्ञान-योग के पुष्प न महकते हों।

सेवा में नम्बर प्राप्ति का आधार क्या ?

सेवा की दौड़ में दौड़ने वाले राही इस बात की सदा ही उधेड़बुन में रहते हैं कि ये सेवा छोटी है और ये सेवा बड़ी । और बहुत से लोग उसी सेवा के पीछे भागते हैं, जहां मान ज़्यादा मिलता हो । समझते हैं कि स्थूल सेवा में कम व वाचा की सेवा में ज़्यादा नम्बर (Marks) मिलते हैं । परंतु यह सत्य नहीं।

ईश्वरीय महावाक्य हैं—जो सेवा ईश्वरीय मत-अनुसार सच्चे मन से योग-युक्त होकर की जाती है, वह पूर्ण मार्क्स देती है। इस विषय को हम थोड़ा विस्तार से लें। मान लो कोई साधारण-सी सेवाएं, सच्चे मन से प्रभु के गुण गाता हुआ करता है तो उसे काफ़ी मार्क्स प्राप्त होंगे । परंतु दूसरा कोई कई सेवाकेंद्र खोलता है, यहां-जहां-तहां भाषण करता है, परंतु अहम् से फूला रहता है, अपने को इन्चार्ज समझता है तो उसे काफ़ी कम मार्क्स प्राप्त होंगे ।

इस प्रकार सेवा की गति अति महान् है। वास्तव में सच्ची सेवा का तात्पर्य सबको सुख देना व शुभ-भावनाएं रखना है। परंतु यदि कोई अपनी सेवाओं से दूसरों को सुख न पहुंचाएं, सुंदर सेवा करके यदि मुख से तीखे तीर फैंक कर, दूसरों के दिल को घायल कर दे तो उसे सेवा के क्षेत्र में कम-से-कम मार्क्स ही प्राप्त होंगे ।

सेवा हमारी स्थिति का दर्पण है—

हमारी सेवा के कितने नम्बर हमें मिल रहे हैं—इसको हम इस तथ्य से जान सकते हैं कि सेवा हमारी श्रेष्ठ स्थिति बनाने में कहां तक मददगार है और हम सेवा में सफलता स्वरूप कहां तक बने हैं । यदि सेवा हमें गिरती कला में ले जा रही हो तो हमें समझना चाहिए कि हमारी सेवा निष्फल जा रही है। जो सेवा हमारी स्थिति में चढ़ती कला का अनुभव कराए—वही सेवा फल-दायिनी व बल-दायिनी है।

साथ-साथ हमारी स्थिति का प्रभाव हमारी सम्पूर्ण सेवाओं पर पड़ता है। यदि हम योग-युक्त हैं तो सेवाओं से उसका प्रत्यक्ष दर्शन होगा । यदि हम अंतर्मुखी हैं तो सब आने वाले भी उसे अपनाएंगे । यदि हम पवित्रता में मज़बूत हैं, तो हमारे संगठन में इसका स्वरूप देखने में आएगा । इस प्रकार निमित्त आत्मा की स्थिति सेवा का आधार है।

इस प्रकार हमारी सेवाएं हमारी स्थिति का दर्पण हैं। यदि हम विजयी-रत्न हैं तो हमारे साथी भी सहज ही विजयी बन जाएंगे, परंतु यदि हमारे सेवा-क्षेत्र में तनाव है, टकराव या बिखराव है, एकता नहीं है तो यह भी हमारी ही स्थिति का प्रतिबिम्ब है। यदि हमारा संगठन शक्तिशाली नहीं तो इससे हमें अपनी शक्ति को नाप लेना होगा ।

जहां संघर्ष है, वहां ईश्वरीय संग नहीं—

सेवा में किसी भी तरह का संघर्ष आत्मा को योग-युक्त नहीं रहने देता । यदि कोई सेवाधारी सेवा को संघर्षमय बनाता है तो उसे स्वयं ही सेवा से हट जाना चाहिए । अन्यथा ऐसी आत्मा सेवा में भारी विघ्न होती है। और ऐसी आत्मा जीवन में कभी भी सुख की श्वास नहीं ले पाती ।

ईश्वरीय सेवा चारों युगों में सबसे अधिक दिव्य कार्य है। और दिव्य कार्य वही है जो अनासक्त होकर किया जाए और दूसरों को सुख देने के लिए निस्वार्थ होकर किया जाए । हम विचार करें कि यदि ईश्वरीय खज़ाने से भी हम दूसरों को सुख न दे सके तो हम अपने खज़ानों से भला दूसरों को क्या सुख देंगे । जहां सुख-स्वरूप होने का संकल्प है, वहीं अनासक्त भाव है और वहां कभी भी संघर्ष नहीं होता । इस कारण वहां सदा ही योग-युक्त वातावरण की बहार बनी रहती है और वहां प्रत्येक प्राणी शीतल छाया की तरह बैठना चाहता है।

सबसे श्रेष्ठ सेवा कौन-सी है ?

गिरतों को उठाना, डूबतों को बचाना, जिसका कोई नहीं उसे सहारा देना, निराश व्यक्ति के मन में आशा का दीप जलाना, सबको उमंग दिलाकर आगे बढ़ाना—यही सबसे महान् सेवा है। योग-युक्त वातावरण बना देना, जहां व्यर्थ बोल व संकल्प न हों, जहां आकर आत्माओं को चैन मिले, सर्वश्रेष्ठ सेवा है।

अपनी त्याग वृत्ति के द्वारा ही मनुष्य ऐसी सेवा कर सकता है। यदि सेवा में त्याग वृत्ति नहीं तो मेरा-पन है और फलस्वरूप तनाव है । जिस सेवा में तनाव है, उसे कनिष्ट सेवा ही कहा जाएगा । इस प्रकार, ''मैं कुछ नहीं करता''—यह आभास हमें श्रेष्ठ सेवा के मार्ग पर अग्रसर करता है।

इसी प्रकार किसी को योगी बना देना, किसी को महान् बना देना, किसी के दुख हर लेना व किसी के मन को आराम दे देना—यही सर्वश्रेष्ठ सेवा व सेवाधारी के चिन्ह हैं।

तो आओ, हम सभी महान् सेवाधारी एक बार फिर एकता के बल से सेवाओं में रस भर दें। जहां न कोई बड़ा हो, न छोटा, सब समान हों, सबमें एक परमपिता की याद समाई हो, सबके दिल पर परस्पर सहयोगी रहने की भावना हो, सब दूसरों की गलती को अपनी ही गलती मानकर एक-दूसरे को आगे बढ़ाते हों। जहां दूसरों को आगे बढ़ता देख हमारे दिल शीतल हों, जहां परस्पर विशुद्ध स्नेह की महक से वातावरण सुगंधित हो। ऐसी सच्ची सेवा ही आत्मा को अत्यधिक बल प्रदान करती है और ऐसी सच्ची सेवा ही ईश्वरीय अनुभूतियों का आधार बन जाती है। □

पृष्ठ ५ का शेष

वैश्विक आध्यात्मिक सहयोग बैंक

कार्य हो सकेगा। आज तक सबने पुरानी सृष्टि चलाने के लिये अनेक प्रकार के पुरुषार्थ किये। किंतु अब जरूरत है नई सृष्टि की स्थापना के लिये विशेष पुरुषार्थ की। हरेक अपना जो विशेष ज्ञान (विशेषता) है उसे अब कैसे नये विश्व की स्थापना हेतु लगाए, यह बात विभिन्न लोगों से हम लिखायेंगे। इस प्रकार सब सहयोगी बनेंगे तो कलियुगी पहाड़ जल्दी उठ जायेगा। हम स्वत: जब एक कदम आगे रखेंगे तो फिर अन्य औरों की सेवा करके उनके सहयोग का दान दिलाने निमित्त बनेंगे। इस प्रकार खुद तथा खुद के दोस्तों को खुदा के कार्य में मददगार बनायेंगे। इस तरह खुद, खुदा दोस्त के सहयोग से, खुदा का कार्य जल्दी सिद्ध होगा।

इस अविनाशी बैंक में दानपत्र जमा कराने से, परिणाम रूप में होने वाले आनन्द की प्राप्ति ही सर्व प्रकार की प्राप्ति का एक सेंपल (Sample) है। यह अविनाशी खुशी का बल, धन-राशि आदि के बल से बहुत ही उत्तम है। सर्व का उत्तम भाग्य बनाना यही बैंक का लक्ष्य है। यह कार्य समस्त विश्व में होनेवाला है। सभी धर्म, देश, भाषा, वर्ण, वर्ग के लोग यह कार्य करेंगे क्योंकि नया-विश्व,अखंड विश्व है उसमें कोई भेद-भाव नहीं है। अखंड अविनाशी भाग्य बनानेवाले इस अविनाशी बैंक का कार्य—ईश्वरीय सेवा के रूप में करना है। सेवा की क्षितिज (Horizon) का विस्तार बढ़ता है, तो क्यों नहीं हम उसको सहयोग दें—उसका सहयोग ले और अपने भाग्य का क्षितिज-विस्तार बढ़ावें ? ●

नई दिल्ली: ब्र.कु. शुक्ला, भ्राता एन.आर. चन्द्रन, पूर्व महाप्रबंधक, पी.टी.आई को पावन राखी बांधते हुए।

आध्यात्मिक सेवा समाचार

रक्षाबंधन संगमयुगी ब्राह्मणों के लिए अपनी धारणाओं को आगे बढ़ाने एवं मानव मात्र को 'योगी बनो, पवित्र बनो' का ईश्वरीय संदेश देने का शुभ अवसर होता है। इस उपलक्ष्य में हमारे कार्यालय में सर्विस समाचार के अम्बार लग गए हैं। हज़ारों फोटो सेवा समाचार के प्राप्त हुए हैं । यदि ये सारे समाचार 'ज्ञानामृत' में छापे जाएं तो कई अंक इसी में समाप्त हो जाएंगे । अत: हम ने काफी समाचार सचित्र छापे हैं। जो फोटो ठीक नहीं थे या देर से पहुंचे हैं या उनके पीछे कैप्शन लिखी हुई साफ-साफ नहीं थी वे नहीं छापे जा सके हैं।

इस बार भी पिछले वर्ष की भांति देहली में राष्ट्रपति, केन्द्रीय मंत्रियों, उपमंत्रियों, सचिवों, धार्मिक नेताओं, पार्षदों, नगरनिगम के सदस्यों तथा अन्य महानुभावों को राखी बांधकर 'सर्व के सहयोग से सुखमय संसार' कार्यक्रम से अवगत कराया गया।

भारत के भिन्न राज्यों की राजधानियों से भी समाचार प्राप्त हुए हैं कि वहां राज्यपालों, मुख्यमंत्रियों, मंत्रियों तथा अन्य गणमान्य व्यक्तियों को राखी बांधकर 'पवित्र बनो, योगी बनो' का संदेश दिया गया। भारत के कोने-कोने से समाचार प्राप्त हुए हैं कि स्थान-स्थान पर जिलाधीशों, जजों, वकीलों, डॉक्टरों, विधायकों, सरपंचों को राखी बांधी गई। अन्य कई स्थानों से समाचार मिले हैं कि जेलों में कैदियों, जेलरों, हस्पतालों में मरीज़ों और डॉक्टरों-नर्सों को राखी बांधी गई। कई स्थानों पर रीमांड होम, अन्ध विद्यालयों, मूक, बधिर, विकलांग बच्चों को स्नेह सूचक राखी बांधी गई तथा उन्हें प्रसाद दिया गया। किन्हीं स्थानों पर बस ड्राइवरों तथा कंडक्टरों को राखी बांधकर व्यसन छोड़ने की प्रतिज्ञा कराई गई। कई स्थानों पर रक्षाबंधन पर 'युवा स्नेहमिलन' रखे गए। इन सब कार्यक्रमों द्वारा राखी पर्व पर जन-जन को ईश्वरीय संदेश दिया गया। □

नेपाल के प्रधानमंत्री श्री मरिचमान सिंह श्रेष्ठ जी को राखी बांधने के पश्चात आत्म-स्मृति का तिलक देती हुई ब्र.कु. राज।

देहली (पहाड़ गंज): महाबोधी सोसाइटी ऑफ इंडिया के आर्यवंश नायक महाथेरा को ब्र.कु. शील आत्म-स्मृति का तिलक देती हुई।

दहीसर (बम्बई) सेवाकेंद्र द्वारा हस्पताल में डॉक्टरों को राखी बांधी गई। ब्र.कु. उषा एक सर्जन को राखी बांधते हुए।

श्रीनगर (देहली): 'युवा स्नेहमिलन समारोह' के अवसर पर (बाएं से) बी.के. कृष्णा, बी.के. चक्रधारी, बी.के. राजकुमार तथा बी.के. बालकिशन।

होडल: जन्माष्टमी के पावन पर्व पर झांकी का दृश्य।

जगदीश चन्द्र हसीजा, मुख्य सम्पादक, ब्र.कु. आत्म प्रकाश, सम्पादक ५/१५ कृष्णानगर, दिल्ली द्वारा सम्पादन तथा ओमशान्ति प्रेस, कृष्णानगर, देहली-५१ से छपवाया । Regd No. 10563/65-D. (E)—70